'प्रणवीर' पुस्तकमालाकी ३ री पुस्तक

वीरश्रेष्ठ–सावरकर ।

(श्री० स० रा० रानडे द्वारा लिखित मराठी चरित्रका अनुवाद)

अनुवादक

श्री० सिद्धनाथ माधव लोंढे

प्रकाशक

'प्रणवीर' पुस्तकमाला कार्यालय,

धनतोली, नागपुर ।

प्रथमावृत्ति } १९७४ { मूल्य १० आने
प्रति २००० } { पोस्टेज अलग

' समाज सेवक ' मुद्रणालय नागपुरमें
हीरालाल रामचद्र चाडक द्वारा मुद्रित।

प्रारम्भिक परिचय

यह व्यक्तिका चरित्र नहीं है वरन क्रांतिके उन प्रयत्नोंका अधूरा इतिहास है, उलट-पुलट करनेवाली उन भावनाओंका अस्पष्ट परिचय है बन्धनको तोड़ने वाली उन स्फूर्तियोंका धुंधला चित्र है जो जलते हुए हृदयकी उत्कृष्ट लगनसे पैदा होती हैं। सावरकरजीके आज तकके प्रयत्नोंसे यदि देश स्वतन्त्र न हुआ तो, यह परिस्थिति और साधन सामग्रीकी कमीका दोष है। साधनोंसे कोई सहमत हो या न हो, उनके अनुसार कोई कार्य करे चाहे न करे पर प्रत्येक सहृदय हिन्दुस्थानी इस बातसे इनकार नहीं कर सकता कि स्वतन्त्रता प्राप्तिका यह मार्ग, निराशाओंकी अंतिम वेदनाओंसे जन्म पाता है। सशस्त्र प्रतिकारके मार्गमें प्राणकी आहुति चढ़ानेवाले, संसारमें सर्वत्र पूजे गये हैं, पूजे जा रहे हैं और पूजे जायेंगे।

सावरकरजीके एक सहपाठीको ३ वर्ष पहले सन १९२१में, मैंने यह कहते सुना था कि 'जब वे लन्दनमें थे, तब इतनी सफलताके साथ संगठन करते थे, इतनी अनिवार्य आवश्यकताके साथ मनुष्यको अपनी ओर खींचते थे कि हम लोग सहजहीमें उनकी बात मान लिया करते थे। नेपोलियन जैसी योग्यता और दृढ़ता हम उनमें देखा करते थे। अगर वे इस समय मुक्त होते ।" पर सरकारने उन्हें तब भी मुक्त नहीं किया और अब भी वे नजर कैद हैं और ७ सालतक रहेंगे।

मराठी भाषामें श्री० सावरकरजीकी जीवनी मालवन जि० रत्नागिरिके श्री० सदाशिव राजाराम रानडे महाशयने लिखी। उसका मराठीमें इतना आदर हुआ कि कई हजारोंकी प्रथमावृत्ति (अगस्त १९२४) एकही मासमें समाप्त हो गयी! आजसे लगभग डेढ़ साल पूर्व, रत्नागिरि जेलमें श्री० सावरकरजी रखे गये थे। मराठी जीवनीके लेखक रानडे महाशय उन दिनों वहाँकी राष्ट्रीय शालाके विद्यार्थी थे। उनको मालूम हो चुका था कि सावरकरजी रत्नागिरि जेलमें हैं। उनके दर्शनकी उत्सुकता बढ़ चली। आखिर अन्य प्रयत्नोंमें असफल हो, एक दिन रानडे महाशय रत्नागिरि जेलसे कपड़ा खरीदने गये। वहीं

फाटकके भीतर, जेलके दफ्तरसे वापिस लौटते हुए सावरकरजी उन्हें दिखाई दिये। अपनी आधी इच्छा पूर्ण हुई समझकर रानडे महाशयने सावरकरजीको पीठपीछे सादर प्रणाम किया।

आगे, उन्हें सावरकरजीके गीत, सावरकरजीका कार्य आदिका विशेष आकर्षण होने लगा। आखिर सावरकरजीके मित्र श्री विश्वनाथराव केलकर, सावरकरजीके भाई तथा अन्य परिचितोंसे सामग्री एकत्र करके उन्होंने यह अल्प चरित्र लिख डाला। इसमें कही गई प्रायः सभी बात प्रामाणिक है।

जबतक मराठी भाषामें श्री० सावरकरजीका कोई विस्तृत चरित्र लिखा नहीं गया है, तबतक श्री० रानडेका लिखा हुआ अल्प चरित्र अनेक नवयुवकोंमें नयी स्फूर्ति उत्पन्न करेगा। स्वयं सावरकरजी जिस दिन अपने हाथों अपना सम्पूर्ण चरित्र लिखेंगे, उस दिन, सम्भव है, इस अल्प चरित्रमें स्थान स्थानपर दिखाई देनेवाली खामियां पूरी हो सकें।

इस पुस्तकका अनुवाद और प्रकाशन प्रणवीर—सञ्चालक श्री० भैयालालजी सतीदासजीकी प्रेरणासे हुआ है। तीन वर्षतक 'प्रणवीर' जैसे शुद्ध साप्ताहिक पत्रका सञ्चालन करनेवाले इस तरुण देशभक्तसे हिन्दी संसार अपरिचित-सा मालूम होता है। नाम या यशकी जरा भी परवाह न करते हुए, अनेक सम्बन्धियों और मित्रों द्वारा मना किये जानेपर और अनेक आर्थिक कठिनाइयोंका मुकाबला करते हुए, वे लगातार लगनके साथ 'प्रणवीर' चला रहे हैं। मारवाड़ी समाजमें बहुतही अल्प परिमाणमें दिखाई देनेवाले साहस और देशभक्तिके साथ वे अपने निश्चित मार्गसे देशसेवा कर रहे हैं। मैं आशा करता हूँ कि ईश्वर उन्हें दीर्घजीवी करेगा और उनके हाथों और भी कई उपयोगी काम होंगे।

अनुवाद जैसा हुआ है, पाठकोंके सम्मुख है। जहांतक बनसका मूल पुस्तकके भावोंकी रक्षाका प्रयत्न किया गया है। मूल पुस्तक बहुत आकर्षक ढंगसे लिखी गयी है, यदि अनुवादमें वह आकर्षकता न आयी हो, तो उसके लिए मैं ही सर्वथा दोषी हूं। दसवां अध्याय मूल पुस्तकमें नहीं है मैंने जोड़ दिया है।

'मध्यभारत' प्रेस, खण्डवा।
विजया दशमी १९८१
७ अक्तूबर १९२४

सिद्धनाथ माधव लोंढे

वीर श्रेष्ठ विनायकराव सावरकर

वीर-श्रेष्ठ सावरकर ।

प्रथम अध्याय ।

जन्म और बाल्यावस्था ।

समाचार-पत्रोंके पाठकोंको स्मरण होगा कि कुछ दिन हुए, नासिक जिलेके भगूर नामके गावमें रहने वाले लोगोंने वहांके गोरे लोगोंकी छावनी के विरुद्ध आंदोलन मचाया था । इसी छोटे गावमें बैरिस्टर विनायकराव सावरकर का जन्म, सन १८८३ के मई मास में हुआ था । विनायकरावजी के पिता श्री दामोदरपतजी विद्वान, धार्मिक एवं सच्छील सद्गृहस्थ थे । वे प्रतिभा-संपन्न कवि भी थे । एक प्रतिष्ठित कुलमें उन्होंने जन्म पाया था । आने-जाने वाले अतिथियों की उनके यहा प्राय भीड रहा करती थी । श्री दामोदरपतके एक पूर्व-पुरुषने पेशवाईके जमानेमें स्वपराक्रमसे एक जागीर कमाई थी—सन १९०९ में सरकारने वह जागीर जब्त कर ली । श्री. दामोदरपत के ४ सन्तान थीं । सबसे बडे पुत्रका नाम है, गणेश पत, उर्फ बाबा सावरकर । ये बैरिस्टर सावरकरके ९ मास पहले ही आजन्म कारावासकी सजासे मुक्त हुए हैं । चरित्र-नायक विनायकरावजी द्वितीय पुत्र हैं। तीसरी कन्या हैं श्रीमती मैनाबाई । इनका

विवाह, त्र्यम्बक स्थान के श्री० कालेके यहा हुआ है। चौथे डा० नारायणराव सावरकर। 'बाबा' सावरकर विनायकरावजीसे ४ वर्ष बडे हैं और डा० सावरका ५ वर्ष छोटे।

* * *

बचपनमेही बालक विनायकरावको कविता बनानेकी इच्छा हुई। उस समय वे बहुतही छोटे थे—उनका उपनयन संस्कार भी नहीं हुआ था। इनकी माता मराठी कवियोंके लिखे हुए, प्रासादिक कविताओंसे पूर्ण, हरिविजय रामविजय आदि ग्रथोंका नित्य-पाठ किया करती थीं। श्री विनायकराव बडे चावसे उन्हें सुना करते थे। इनके पिताने इन्हें प्रसिद्ध मराठी कवि मोरोपतका एक भक्ति-रसपूर्ण काव्य—संशय-रत्न-माला—मुखोद्गत कराया था, उसे ये बडे प्रेमसे बार बार गुनगुनाया करते थे। काव्यके नित्य-पाठके कारण इन्हें भी काव्य-निर्माणकी स्फूर्ति हुई और इस बालकने एक महा काव्यकी रचनाकी प्रतिज्ञाभी कर डाली। प्रतिज्ञा करनेवाला कवि, स्वयही नहीं जानता था कि वह कौनसा महा-काव्य निर्माण करेगा और किस तरह। पर वह छोटी मोटी कविताए बनाता और कहता कि मैं महाकाव्य अवश्य निर्माण करूगा। इसी विचारसे इस अष्टवर्षीय बालकने कविता-देवीकी आराधना आरभ की। उपनयनके पहलेही वह 'ओवी' नामक मराठी छन्दमें बडी सीघ्रतासे कविता बनाता था। महाराष्ट्रकी अल्प-वयस्का कन्याए, इस छन्दमें बनायी हुई कई कविताए मुखोद्गत करती हैं और जब किसी सहेलीके घर जाती हैं, तब झूलेपर बैठकर, सभी कन्याए अपनी अपनी 'ओवियां' गा०र

बतलाती हैं। महाराष्ट्रीय लड़कियोंका यह एक मनोरञ्जक एवं शिक्षाप्रद खेल है। हमारे चरित्र-नायकके घर जब कभी लड़कियां एकत्र होतीं और "ओवियोंका मैच" शुरू होता, तब विनायकराव भी उनमें मिल जाते और अपनी प्रतिभासे नयी 'ओविया' तत्काल रचकर समस्त लड़कियोंको हरा देते! पूनासे प्रकाशित होनेवाले 'जगद्धितेच्छु' नामक समाचार-पत्रमें विनायकरावकी कविता प्रकाशित होने लगी थी। उस समय इनकी अवस्था केवल १० वर्षकी थी। आगे दी हुई 'स्वदेशीचा फटका' शीर्षक कविता इनकी इसी समयकी रचना है।

* *

जगद्धितेच्छु-सम्पादकको मालूम भी नहीं था कि वे एक दश-वर्षीय बालककी कविता छाप रहे हैं, यदि ऐसा मालूम होता तो शायद व कविता को छापते भी नहीं। श्री० दामोदरपंतजीके घरमें, पेशवाओंका एक पुराना इतिहास—बखर—था। 'निबंधमाला' का एक भाग, महाभारतका कुछ अनुवाद, तथा 'स्वधर्म-प्रदीप' नामक मासिक पत्रके पुराने अंक भी उनके संग्रहमें थे। विनायकराव इन पुस्तकोंको बार बार पढते थे, इसलिए वे उन्हें प्राय: मुखोद्गत हो गयी थीं। पशुओंकी बातें करते समय विनायकराव कविता बनाते थे। अपने समवयस्क मित्रोंको उन्होंने श्री शिवाजी महा-राजका इतिहास, कुछ कविता और कुछ कहानियोंद्वारा सिखाया था। शिवाजी-चरित्र तो वे अपने मित्रोंको बड़े उत्साह एवं स्वाभिमान पूर्वक सुनाते थे।

* * *

मौजी-बन्धनके थोडे ही दिन बाद, इन बच्चोंकी माताका परलोकवास हुआ और यह छोटे छोटे बच्चोंका कुटुम्ब असहाय हो गया। श्री. दामोदरपतकी आयु, इस समय, लगभग ४० वर्षकी थी। उन्होंने दूसरा विवाह नहीं किया, तीन बरसोंतक अपने हाथोंसे रसोई बनाकर अपने चारों बच्चोंका पालन-पोषण, माताकी अपेक्षा अधिक प्रेमसे, करते रहे। ये बातें सन १८९३ की हैं। इन्हीं दिनों बम्बईमें हिन्दू-मुसलमानोंके दंगे हुए थे। उनके समाचार समाचार-पत्रोंमें पढकर, विनायकरावने अपने बालमित्रोंको एकत्र किया और हिन्दू समाज एवं धर्मकी रक्षा का विचार करने लगे! अन्तमें निश्चय हुआ कि मुसलमानोंद्वारा किये गये अपमान का बदला, भगूर गावके बाहर की मस्जिदपर हमला करके, निकाला जाय। बस, इस निश्चय के अनुसार उन छोटे छोटे १०।१२ वीरोंकी टोली, लुकते छिपते, सायंकालके समय मस्जिदपर हमला करनेके लिए गयी। वहां कोई भी नहीं था,—शायद इस प्रचंड बाल-चमूको देख कर ही दुश्मन भाग गया होगा!

* * *

इस उपद्रवी टोलीने मनमाने ढंगसे उक्त स्थानको छिन्न-भिन्न किया और श्री छत्रपति शिवाजीके हमलोंका पाठ पठन करके वे लोग वापिस चले। आगे चलकर ये समाचार भगूरके मुसलमान लडकोंको मालूम हुए और स्थानीय मराठी पाठशालाके रणक्षेत्रमें, पाठ-शालाके बरामदेमें, अध्यापकके आनेसे पूर्व, इन दलोंका महायुद्ध हुआ! मुसलमान लडकोंके दुर्भाग्यसे उनके पास आलपीनें, चाकू वगैरह

नहीं थे। विनायकरावकी अधीनतामें लड़नेवाले हिन्दू बाल-वीरोंके पास ये हथियार थे। भला शस्त्रोंके बिना भी कोई लड़ाई जीता है? हिन्दुओंकी विजय हुई। मुसलमान लड़के खीजे और उनमेंसे बड़े बड़े लोगोंने विनायकरावको ही भ्रष्ट करनेकी प्रतिज्ञा की। अपनी हारको मिटानेके लिए उन्होंने विनायकरावके मुँहमें मांस डालनेका प्रयत्न किया, पर उन्हें सफलता न मिली। पर, इनका परस्पर मनोमालिन्यकी आग शान्त न हुई। मस्जिद पर हल्ला करते समय कुछ लड़के जरा पीछे रहने लगे थे, कुछेकने पेशाबके बहाने घरका रास्ता नापा था, कुछने बाहर रहकर पहरा देनेका काम ले लिया था। जब विनायकरावने अपने मित्रोंकी कायरता देखी तब वे उन्हें धैर्य धारण करनेके लिए उपदेश देने लगे। उनकी बातें सभीको पसन्द आयीं। विनायकरावने उनकी शिक्षाके लिए एक 'सैनिक शाला' स्थापन की। इस शालामें भरती होनेवाले बालकोंके दो विभाग किये जाते थे। बीचमें एक झण्डा लगा दिया जाता था। एक पक्ष अपने आपको 'हिन्दू' पक्ष कहता और दूसरा मुसलमान अथवा अंग्रेज पक्ष बनता। बीचका निशान मिट्टीके ढेलोंसे गिराकर विपक्षीकी हदमें घुसना ही, विजयी होना समझा जाता था। प्राय विनायकरावके पक्षकी विजय हुआ करती थी। वे सदाही हिन्दू पक्षमें रहा करते थे। किसी बार, अगर उनका पक्ष हारता, तो वे देशभक्तिके गीत गाने लगते। परिणाम यह हुआ करता था कि विपक्षी भी इनके वीर गीतसे प्रभावित होकर, अपयशकी परवाह न करते हुए, इनमें आ मिलते। जैसे हो, हिन्दुओंकी जीत अवश्य की जाती और यह विजयी बाल-सेना भगूर ग्रामकी तंग गलियोंमें, विजयके गीत गाती हुई जुलूस निकालती।

※ ※ ※

सन १८९७ का समय था। 'पूनावैभव', 'केसरी', 'सुधारक' 'जगद्धितेच्छु' आदि समाचारपत्रोंके प्रत्येक अङ्क विनायकराव पाठ करते थे। उनके अन्य बाल-मित्रोंका इधर ध्यान भी न जाता। विनायकराव उन मित्रोंको राजनैतिक परिस्थिति समझाया करते थे। पूनेका 'जाति बहिष्कृति' वाला मामला, प्लेगकी गडबड, शिवाजी उत्सव, गणेशोत्सव, स्व० लोकमान्यजीका कौन्सिलका चुनाव आदि बहुविध आंदोलनोंकी प्रतिध्वनि इस बालकके हृदयसे इतनी तीव्रतासे निकला करती थी कि खास पूनेमेंभी उतनी तीव्रता प्रगट न होती होगी। इन्हीं बातोंको सोचते सोचते इन्हें आधी रात तक नींद न आती थी। रातके समय इनके सहपाठी पाठशालाकी पुस्तकोंके पाठ समझनेके लिए इनके पास आते, तब उनको अपनी पढी हुई कुल बातें ये समझाया करते और हिन्दुस्थानको स्वतन्त्र करनेके उपाय ढूंढ निकालनेकी चर्चा करते। इन दोस्तोंमे, भगूरके एक दर्जी, राजनाके लडके, गोपाल एवं भीकाजी प्रमुख थे।

* * *

भगूर गावका नाम गत ३ वर्षोंसे समाचारपत्र-पाठकोंके सम्मुख आता रहा है। देवलालीकी छावनीके विषयमें जो आन्दोलन उठा था, उसके नेता श्री० गोपालराव देसाई ही सावरकरजीके बालपनके "गोपाल" थे। उक्त आंदोलनमें जेल जानेवाले लोग सभी विनायकरावके बालकपनके साथी थे। सन १८९७ में विनायकरावकी अवस्था १४ वर्षकी थी, अतएव उनका बाल्य काल यहीं समाप्त होता है।

* *

विनायकरावकी बचपनकी कविताका नमूना देखिए —

'देशी फटका'

आर्य बधुनो उठा उठा का मठासारखे न्टा सदा।
हटा सोडुनी वटा करू या म्लेच्छ पटा ना धरू कदा ॥१॥ ध्रु
काश्मीराच्या शाला सोडुनी अलपाकाला का भुलता ?॥
मलमल त्यजुनी वरवल चित्तीं हलहलके पट का वरिता ?॥२।
राजमहेंद्री चिटा त्यजुनि का विटके चिट हें का घेता ?॥
दैवे मिळता शाटि, इच्छिता नरोटि नाहीं का होता ! ॥३ ॥
येवलि सोडुनि पितांबराना विचार करण्यासाठि महा ॥
वेजारचि तुम्हि नटावयामधि विचार करितो कोणि न हा ४॥
केलि अनास्था तुम्हिच्चि स्वत मग अर्थातचि ती कला बुडे ॥
गेले दिन हे नेले हिरनी मले तुम्हि तरि कोण रडे ?॥५॥
अरे आपणच होतों पूर्वी सर्व कलाची खाण अ ॥
भरतभूमिच्या वुशीं दीप त कलंक आता अम्ही पहा ॥६॥
जगभर भरुनी उरला होता तुरला आता व्यापार ॥
सकलहि कलाभिज्ञ तेधवा अज्ञ अता अरिही थोर ॥७॥
निर्मियली मयसभा अम्हिचिना ? पाडव किरिटी अठवारे ॥
मट्ठ लोकहो ! लाज काहिंनरि ? लठ्ठ असुनी शठ बनलारे ॥८॥
आम्रफ्लाच्या कोयीमध्ये धोतरजोडा वसे सदा ॥
होत जेथे प्रतिब्रम्हेची धिक मी जन्मुनी अपवादा ॥९॥
हे परके हरकामीं सुलवति भुलवति वरवर वाचेनें ॥
व्यवहार रीती ऐशि वगैरह सदा हरामी वृत्तीनें ॥१०॥
कामधेनुका भरतभूमिका असूनि मग का ही भिक्षा ॥
सहस्र कोसावरूनि खासा पैका हरतो प्रभुदीक्षा ॥११॥

नेती कच्चा माल आमुचा देती साचा पक्व रुपें ॥
अमुच्या वरतीं पोटें भरिति थोरि कशाची तरी खपे ॥१२॥
पहा तयाची हीच रीत हो ! मिती नसे त्या लबाडिला ॥
नाना कर्में नाना वर्में देश आमुचा लुबाडिला ॥१३॥
निमुली हालामधली फडकों फडफड नाना ध्वज वरतीं ॥
हटलहप्पसे करुनि शिपाई निघत स्वारी जगभर ती ॥१४॥
नाना परिचे रग भंगीती रग पुष्प ते दग करी ॥
मोर, कावळे, ससे पारवे श्वापद विचरती सीं धकरीं ॥१५॥
राजगृहीं, गोपुरें झळकती मजले सजले त्यामधुनी ॥
सुदर नारी दु ख हर्प मरि त्या घचवि शोभा तरुणी ॥१६॥
नाना जाती पिकली शेती गार, हीरवें वस्त्र धरीं ॥
भात बाजरी गहू गाजरि आच्छादिलि हि भूमि वरी ॥१७॥
अगनग गेले गगन चुंबिण्या सर्व थोरवहु कोराकी ॥
भासे पुरुषची निजाकि बसवी स्यानदानें पोरा की ॥१८॥
चित्रे ऐशीं दाविति छत्रें विचित्र तुझा भुल ध्दा ॥
तुझीहि सुलता पक्षाता घता क्षणात स्वपटाला निंदा ॥ १९॥
याला आता उपाय दरवा एकी करवा मन भरवा ॥
ओतप्रोत अभिमानें हरवा देशी धद पट करवा ॥२०॥
परके घरवर किंतिहि बोल्ली गोड गोड तरि मनि समजा ॥
सुदर म्यानीं असे असिलता घातचि होइल झट उमजा ॥२१॥
रावबाजि हरि गाजि जाहले राज्य बुडालें तरि सुरुय ॥
सत्य असे परि परकीयाचे गोष्ट हृदयि ही धरु लरद ॥२२॥

वैर टाकु या वास्तव लौकर खेर करो परमेश्वर ती ॥
निश्चय झाला मार्ग अपुला परदेशी पट ना धरती ॥२३॥
चला चला जाउं या घेउं या देशि पटाना पटापटा ॥
जाडे भरड गडे असेही असो सेवु परि झटाझटा ॥२४॥
ना स्पर्शूं त्या पशुपटाला मन वरि निखार वर भावू ॥
घेऊं स्वदतर अहीं सुखकर धर्मचि मानुनिया राहू ॥२५॥
द्रव्य खाणि ही खोर घेउनि परकी पोरें खणितीर ॥
एकचित्त करनिया गेह्यानों ! नित्त जिकुया पुनरपिर ॥२६॥
त्रिदशश्वरि ती नारायणि ही यमहरि हर अदि सुखवणिी ॥
धर्म सिद्धिसि दावो नेउनि मोद देति निज भक्त जनीं ॥२७॥
दर अज्ञानी रजनी जाओ साग प्रकाशो रविज्ञान ॥
वरावयाला रत्न पटाना करो आर्य ते रणदान ॥२८॥
कवितारूपी माला अर्पी आर्य वधुशीं सार्थक हो ॥
भक्ताकरवी मन देवार्गी सेवा त्यागीं अर्पण हो ॥२९॥

भावानुवाद। आर्य भाईयो ! जागो। क्यों तुम मूर्ख सरीखे विदेशी वस्त्रोंसे अपने शरीरको सजाते हो ? इस हटको छोड दो। आओ, हम निश्चय करें कि म्लेच्छोंके बनाये वस्त्र कभी धारण नहीं करेंगे। कश्मीरके शाल–दुशालोंको छोडकर, अलपकेपर तुम मोहित होते हो ? मलमलको छोडकर अपने चचल शरीर पर हल्के वस्त्र क्यों चढाते हो ? राजमहेन्द्रीकी चीटोंको छोडकर कच्चे रंगवाली चीटें क्यों खरीदते हो ? अरे ! तुम्हें ईश्वरने कटोरी दे रखी है, तुम नरेटीका अभिलाष क्यों करते हो ? यवलाके बने हुए पीताम्बरोंको छोडकर पतलूनके विदेशी वस्त्रों के लिए बेजार क्यों हो रहे हो

वेष-भूषाके समय तुम इसका विचार नहीं करते! तुमने ही सब कलाकी उपेक्षा की, तब उसका इतना स्वाभाविक ही था। वे दिन गये, ये भी चले, अब तुम मर भी जाओ, तो तुम्हारे लिए रोने वाला भी कोई नहीं है! अरे! हम ही तो समस्त कलाओंके जन्म दाता थे? भारत माताकी कूखसे पहले लोग दीपवत् पैदा हुए थे और हम लोग कारिखकी तरह हैं! हमारा व्यापार-व्यवसाय, समस्त जगत में व्याप्त था वह अब कहाँ रहा है? उस समय हम लोग कलाभिज्ञ थे, आज तो मूर्ख हो गये हैं, और हमारे दुश्मन बड़े बने फिरते हैं। अरे, चेतना विहीन लोगो! कहो तो मय-सभा किसने निर्माण की थी? पाण्डवोंके मुकुट की याद करो। अरे, कुछ तो लाज आने दो। तुम तो मोटे ताजे शठ बन रहे हो! आम की गुठली में धोतियोंका एक जोड़ा समा जाता था— इतना महीन वस्त्र हम बनाते थे। हमारी कुशलता देखकर स्वयं कला भी लज्जित होती थी। ये विदेशी लोग, हर काममें तुम्हें खुश करते हैं और ऊपरी मीठे शब्दोंसे तुम्हें धोखा देते हैं। व्यवहारमें तो तुम्हें ठीक दिखाई देते हैं, पर इनकी वृत्ति हरामी है! अरे! हमारी भारत भूमि कामधेनु है, फिर हम भीख क्यों मांगते हैं? हजार कोसकी दूरीसे दीक्षाप्रभु, हमारा धन हरण करता है। हमारा कच्चा माल ले लिया जाता है और उसे पक्का बनाकर फिर हमें वापिस दे दिया जाता है। हमपर ही ये पेट भरते हैं, पर हमारी बढ़ाई इन्हें जरा पसंद नहीं पड़ती। अरे! इनकी इस चालाकीको देखो, इसका कोई ठिकाना भी है? हर तरहके छल-कपटसे इन्होंने हमारा देश लूट लिया है। हाथमें

रुमाल, नानाप्रकारके ध्वज और बड़े बड़े सिपाही लेकर इनकी सारे देशमें 'सवारी' निकलती है। नानाप्रकारके रंग और पुष्प, मोर, कव्वे, खरगोश, कबूतर, बकरी आदि इनके पास हैं। राजगृहमें बड़े बड़े महल शोभायमान हैं, उनमें सजे सजाये कमरे हैं उनकी शोभा सुन्दर तरुण नारियां दुःख और सुखसे देखती हैं। तरह तरहकी खेती पक रही है, उसने हरा वस्त्र धारण किया है। गेहूँ चावल और बाजरेसे भूमि ढकी हुई है।

*

ऐसे चित्र बताकर तुम्हें भुलावा देते हैं और तुम भी धोखेमें आकर फौरन विदेशी वस्त्र खरीदते हो और अपने वस्त्रोंकी निंदा करते हो। इसका उपाय अब यही है कि एकी करो और लोगोंके मन देशाभिमानसे ओतप्रोत भरदो और देशी वस्त्र तैयार करवाओ। विदेशी लोग ऊपर ऊपरसे चाहे कितनाही मीठा भाषण करें, तो भी याद रखो कि सुंदर म्यानमें तलवार छिपी हुई है, तुम्हारा घात वह अवश्य करेगी। रावनाजीका राज्य क्यों डूबा? इसी लिए कि उन्होंने विदेशियोंसे सख्यत्व किया था। इस बातको हृदयमें पूरी तरह धारण कर लो। इस लिए हम आपसका वैर पहले छोड़दें, परमात्मा हमपर दया जरुर करेगा। हमारा निश्चय पहले हो चुका है कि परदेशी वस्त्र धारण न करेंगे। इस लिए, चलो हम देशी वस्त्र खरीदें। चाहे वह मोटा-धोटा कैसाही क्यों न हो। हम उस पशु-पटको स्पर्श भी नहीं करेंगे जो ऊपर तो नरम है पर जिसके अंदर विष भरा हुआ है। अतमें सुख देनेवाला मोटा वस्त्र ही हम लेंगे

और अपने धर्मकी रक्षा करेंगे। अरे ! हमारे द्रव्यकी खानको, वे विदेशी लोग कुदाली और पावडों से खोद रहे हैं ! मित्रो ! एक चित्त होकर हम अपनी सम्पत्ति पुनरपि प्राप्त करें। वह नारायण, वह विश्वेश्वर, वह यम, हरिहर आदि सुर, हमारे कार्यमें सिद्धि देंगे और अपने भक्तोंको प्रसन्न करेंगे। अज्ञान रुपी रात्रिका नाश हो जावे और ज्ञान रुपी रविका प्रकाश होवे। हमारे आर्य भाइ, रत्न रुपी स्वदेशी वस्त्रोंको धारण करनेके लिए रणदान करें। कवितारु रुपसे यह माला, मैं आर्य बधुओंको अर्पण करता हूँ। इसका हेतु सफल हो। भक्तका मन देवताकी तरफ रहता है, उसे यह सेवा अर्पण है।

द्वितीय अध्याय।

स्वतन्त्रताके विचार।

सन् १८९७ में, तत्कालीन राजनैतिक आन्दोलन शिखर पर पहुच गया था। लोकमान्य पकडे गये थे और उन्हें सजा भी हो चुकी थी। पूनेमें रैंड नामक गोरे अफसरको मारनेवाले चाफेकर बंधुओंमेंसे दामोदरपन्त एवं बालकृष्ण चाफेकर पकडे जा चुके थे। इन दोनों भाइयोंको पकडवाने वाले द्रविड बंधुओंको, वासुदेवराव रानडेने गोलीसे मार डाला था। प्रति दिन कोई अद्भुत घटना हो जाती थी। साहसी आदमियोंके शरीरमें वीरताकी बिजली चमका करती थी। रैंड और आयर्स्ट गये। प्लेग की कठिनाइयां भी गयीं, द्रविड भी गये, चाफेकर बंधु भी गये—और वह १८९७ का भयङ्कर वर्ष भी गया!

* * *

पर उस वर्षकी भयानक दीप्ति, किशोर सावरकरके मनमें घर कर गयी। विनायकरावके समवयस्क युवकोंके मनमें जीवनके रंग-बिरंगे नकली सुखोंके स्वप्न आते थे। पर संसार-सुखके चित्र में विनायकरावके लिए जरा भी आकर्षकता न थी। गम्भीर एवं प्रतिष्ठित लोगोंको जो बातें भयानक मालूम होती थीं, वे विनायक-

रावको अपनी दिव्य आकर्षण शक्तिसे अपनी ओर खींचने लगीं। चाफेकरका स्मरण उनके मनमें बार बार आता। चाफेकर बधुओंके षडयन्त्रके समाचारोंकी पूजा, विनायकराव अपने आसुओंसे करते थे। चाफेकर बधुओंका पता बतलानेवाले द्रविड बधुओंका खून जिस वासुदेवराव रानडेने किया था, उसे अदालतने फांसीकी सजा सुनाई। सजा सुनकर रानडेने कहा था, "अगर चाहो, तो आगामी जन्मकी फांसी भी मुझे इसी जन्ममें दे दो।" रानडेको फांसी दी गयी और उसकी फांसीके समाचार विनायकरावको पत्र द्वारा मिले।

* * *

नवयुवकोंके हृदयमें हलचल पैदा करनेवाली राजनैतिक घटनाएं उस समय हो रही थीं। इधर विनायकरावके हृदय-सागरमें देशभक्तिकी लहर उमड रही थी। इस परतन्त्र देशको फिरसे पुरातन वैभव प्राप्त करानेके लिए, उसे स्वराज्य मंडित करानेके लिए, जवान देशभक्तोंका निर्माण होना आवश्यक है। चाफेकर-रानडे आदि जवानीमें पहलेही रणमेंही चले गये। संसारके सुख सम्पत्तिसे उन्होंने ठोकर मारी। यह सब उन्होंने इस लिए किया कि देशमें स्वतन्त्रता प्राप्त करानेके लिए अनेक राष्ट्रभक्त फिरसे निर्माण होवें। देशके उद्धारके लिए व अपने स्वार्थका होम कर। जब यह बात सत्य है कि स्वार्थकी आहुति चढाये विना दुर्गोद्धार न होगा, तब मैं अपनी बलि देकर देशको स्वतन्त्र क्यों न करूं? यही एक विचार विनायकरावके हृदयमें रातदिन बसा रहता था।

* * *

बालक सावरकर बचपनसे ही अपने कुलकी कुलस्वामिनी देवीकी सुंदर एव भव्य मूर्तिपर बडी भक्ति रखते थ। दवीकी पूजा-भक्तिमें, ध्यानके मत्र गुनगुनाते हुए, सावरकर कभी कभी अपनी सुध भूल जाते थे। उनका विश्वास था कि अंत करणसे की गयी प्रार्थनाको देवी अवश्यही सफल करती है। अपनी कुल स्वामिनीके लिए फूल एकत्र करने, उसकी पूजा सजाने एव सप्तशतीके पाठसे युद्ध-प्रसगके अध्यायोंके पठनमे सावरकर दिन रात मस्त रहते थे। उनकी देवीकी उस समय की भव्य एव सुंदर मूर्ति, आज भी भगूर गावमें विद्यमान है।

*   *   *

एक दिन अपनी कुलस्वामिनी देवीकी भक्तिपूर्ण अत करण से पूजा करके, देशकी दुरावस्थासे जलनेवाले इस वीरने गद्‌गद् अत करणसे देवीका ध्यान किया। अन्मे देवीके पवित्र चरणोपर हाथ रखकर, देवीको साक्षी रखकर—उस समय पूजा-भूषित, सिंहासनारूढ, अष्टभुजा, आयुध धारी, विकसित-कमलपुष्प-शत-धारिणी जगन्माताके सम्मुख हृदयके अतस्तलसे इस युवकने प्रतिज्ञा की इस युवकने वज्रकठोर प्रतिज्ञा की कि अपना समस्त जीवन, समस्त सामर्थ्य, समस्त सम्पत्ति, हे देशमाता! तेरे उद्धारके लिए, तुझे पुनरपि स्वराज्य–मण्डित करने के लिए, वैभव सम्पन्न बनानेके लिए, तेरे चरणोमे अर्पण करूगा। उस छोटेसे देव-मन्दिरमें सुगंधित फूलोंकी महँक भरा हुइ था। घृत-दीप धीमे धीमे प्रकाशसे जल रहा था। धूप का उन्मादकारी सुगंध फूलोंके कोमल

परिमल में सम्मिलित होरहा था। जगन्माताकी वह दिव्य मूर्ति मानों उस मद मद प्रकाशमें, मधुर मुस्कानके साथ, सुहास्य वदनसे कुछ कहती दिखाई देती थी। ऐसे पुण्यतम-वायुमण्डल मे, जगन्माताकी वेदी पर मातृदेशके उद्धार की शपथ, उस किशोरने की। उस समय सावरकर की आयु १५-१६ वर्षकी थी। यह साल सन १८९९ का था।

* * —

हिन्दुस्थानमें आगे चलकर जिस 'अभिनव भारत" नाम की सस्थाका यशोदुदुभि चारो ओर सुनाई दिया, उसकी जन्म-धारणा इस किशोरके इस वज्र निश्चयसे ही हुई थी।

* * *

इस समयसे, विनायकराव अपना बहुतसा समय, अपने विचारोंक प्रचारमें बिताने लगे। भगूर जैसे छोटेसे गावमें इन्होंने शिवाजी-उत्सव, गणेशोत्सव, आदिका आरम्भ किया। अपने चेतना-विहीन समाजमें नवजीवनका सचार करनेके लिए उन्होंने वीर-गीतोंकी रचना की। उनके उस समयके कई गीत अप्त किये जा चुके हैं, पर उनमेंसे एक गीत आज भी कहीं कहीं सुनाई पडता है। जिन लोगोंने इस वीर-गीतको स्वय कविके मुखसे सुना है, उनको मालूम है कि गीत-गायनके समय, आधा घण्टतक मनकी वृत्तियाँ कितनी उमड पडती हैं! अपने जीवनकी आहुति, देशोद्धार के लिए चढाने वाले आत्माका वर्णन सुन-कर श्रोताओंकी आखोंसे आसुओंकी धारा बहने लगती है!

* * *

इधर किशोर सावरकरका यह हाल था, उधर उनके पिता अपने पुत्रके इस नये जीवन-मार्गको देख कर चिन्तित होने लगे। वैसे स्वयं दामोदरपंत (सावरकरके पिता) ने ही बालपनसे उनके हृदयमें काव्य, इतिहास और देश प्रेमकी रुचि उत्पन्न की थी। वे प्राय मनके मनमें उनके गुणोंपर, स्मृति-शक्ति और कर्तव्य शीलता पर, प्रसन्न हुआ करते थे।

* * *

पर जब उन्होंने देखा कि बालक सावरकर, उस अवस्था ही में, उठते बैठते, बलिदानकी बातें करने लगा है, सारीरात जागकर बिताने लगा है, और बाल्य-कालमें ही अपने मुखपर गंभीरता एवं चिन्ता-शीलताके भाव धारण करने लगा है, तब वे जरा घबराए। एक समय, रातके १२ बजे उन्होंने बालक सावरकरको कविता लिखते देखा। विनायकराव कविता लेखनमें तल्लीन हो गये थ। चमकीली आखोंसे आसु बह रहे थे। उन्हें पोछते हुए, कुछ गुन-गुनाते हुए, वह कवि कविता लिख रहा था! दामोदरपंत समीप आकर खडे हो गये, पर तरुण सावरकरको कुछ पता न था! ऐसी अवस्थामें पिताने बडे प्रेमके साथ अपने पुत्रके हाथका कागज लिया और पढा—उसमें एक वीर देशभक्तकी कथा थी। न जाने क्यों, उनके पितृ-हृदय पर चोट पहुँची! विनायकरावसे उन्होने कहा "तात्या! तुम्हारे अल्पवयस्क मस्तिष्क पर इन कविताओंसे कष्ट पहुँचता है, अतएव ऐसी कविता तुम मत लिखो। अन्य किसी विषय पर लिखो, या कोई मनोरंजक पुस्तक पढो।" जब विनायकरावने

देखा कि पिताके सम्मुख कविता नहीं रच सकते तब, -उन्होंने प्रात कालमे पाठ-पठनके लिए उठकर, कविता रचने तथा उसे मुखोद्गत करलेनेका क्रम शुरु किया।

* * *

प्लेगकी धूम मची हुई थी। जहा तहा, मृत दर्दों की स्मशान यात्रा और भाग-दौड मची हुई थी। घरमे किसीकी मृत्युके होने ही, द्वार पर पुलिस आ खडी होती। वह घरमे घुस जाती, उथल पुथल मचाती, सामान असबाब तोडती मरोडती, और घरको जला भुना कर पीछा छोडती। वही भयकर प्रसग सावरकर खानदान पर भी आ गुजरा! इन बालकोंके पिता श्री दामोदरपंत प्लेगके ग्रास हुए। पुलिसवाले घर पर आये और दो भाइयोंको उन्होंने घरसे बाहर हटा दिया। छोटा भाई, बाल, ९-१० वर्षकी अवस्थाका था। प्लेगने उस पर भी आक्रमण किया था। घरमें उथल पुथल हो रही थी। माल असबाव जल रहा था। कई बुद्धिमान (!) लोग कहने लगे—यह छोटा बालक मरेगा ही, इसे यहीं रहने दो। तुम अपनी जान बचाओ। उस समय गनेशपत (विनायकरावके बडे भाई) ने कहा, "मेरे भाईकी इस आसन्न-मृत्यु अवस्थामें, मैं यहासे एक बाल भर भी नहीं हटूगा!" उस आसन्न-मृत्यु बालकको—जिसकी गर्दन लटक चुकी थी, मुहसे पानी और रक्त टपक रहा था, उस ९-१० वर्षके बालकको, कन्धे पर रख कर, १९ वर्षकी अवस्था वाले गनेशपत अपने दूसरे भाई विनायकराव और अल्पवयी पत्नी को साथ लेकर जगलमें चले गये। वहा एक टूटी-फूटी झोपडीमें

उन्होंने निवास किया। रातकी अंधेरीमें उन्हें भय लगता। आस पास कोई पडोसी नहीं था। हां, एक कुत्ता उनकी झोपडीमें रात दिन आकर अवश्य बैठा करता था।

* * *

उस समय गनेशपत के सहपाठी श्री० रामभाऊ दातारने उनकी बडी सहायता की। संकटकी अवस्था में पैदा हुई मित्रता, आज भी इन दो घरानों मे विद्यमान है। इनकी सहायता से गनेशपत नासिक गये और प्लेग-पीडित भाई को सरकारी दवाखाने मे रखकर स्वयं उसकी सेवा-शुश्रूषा करने लगे। दुर्भाग्यसे, उनपर भी प्लेगका आक्रमण हुआ। इधर झोपडी में, उनके बिचले भाई श्री विनायकराव और गनेशपतकी अल्पवयस्का पत्नी ही बच रही। प्लेग पीडित भाइयों को अस्पताल मे भोजन एवं कपडे पहुचाने के लिए विनायकराव को झोपडी से अस्पताल जाना पडता था। रास्ते मे कई लाशें मिलतीं, गावके बेचिराग सुनसान घरोंपर से उन्हें गुजरना पडता, रातकी अंधियारी में उस किशोरको भय लगता, पर सारे भयको दबाकर विनायकराव अस्पताल में अपने भाइयोंकी शुश्रूषा करते और झोपडी में अपनी भावजको सम्हालते।

* * *

ईश्वरकी दयासे दोनों भाई प्लेगसे बच गये। उनके घर आनेके पहलेही विनायकरावने अपना देशभक्तिका कार्य नासिकमे शुरु कर दिया था। प्लेगके अस्पतालमेंही उस किशोरकी एक विशाल हृदय

देशभक्तसे भेंट हुई थी और उनके उपदेशसे प्रभावित होकर जिनाय कराबने देशभक्तिका निश्चय किया था। निश्चयकी पूर्तिके लिए वे अपने सहकारियोंकी खोज करने लगे। पांच-छै सदस्योंके मिलतेही उन्होंने एक संस्था स्थापित की और सरकारके सन्देहकी टेढी निगाहसे रक्षित रहनेके हेतुसे उसका नाम "मित्र मेला" रखा। सरकारी रिपोर्टमें इस 'मित्र मेल'के उद्देश्योंका वर्णन इस प्रकार है —"पराधीनताकी बेडी तोडकर भारत वर्षको गुलामीसे छुडाकर स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए आवश्यक उचित उपायोंसे लडाई लडी जाय—सम्भव हो तो शांतिपूर्ण उपायोंसे और ये उपाय न चलें तो दण्डनीतिसे।"—(रौलट रिपोर्ट)

* * *

इस गुप्त संस्थाने कौन कौनसे गुप्त कार्य किये, यह बात अभी प्रकट नहीं हुई है। प्रकट रूपसे इस संस्थाने जो कुछ काम किये हैं, उनका उल्लेख यहां करनेकी आवश्यकता नहीं। इसी तरह उक्त संस्थाके उद्देश्य, आन्दोलन अथवा साधनोंकी योग्यता-अयोग्यताकी चर्चा करनेका भी यह स्थान नहीं है।

* * *

इन सत्रह-अठारह वर्षके नवयुवकोंने नासिकमें ऐसी शक्ति निर्माणकी कि उसके बल एवं तेजस्विताका परिणाम समस्त भारत वर्षमें प्रकट हो गया। इस संस्थाके तैयार किये हुए लोगोंमें सुविख्यात कवि, वक्ता, कार्यकर्ता और तपस्वी निर्माण हुए,

जिनके अथक परिश्रमसे प्रथम महाराष्ट्र और उसके पश्चात् लन्दनसे अखिल भारतवर्ष, उनके नामोंसे गूंज उठा। उनमेंसे कुछ लोग देश-प्रेम और स्वतन्त्रता-प्रेममें उन्मत्त हो गये और फांसी पर लटकाये गये। कुछ नारकी कारागारोंमें सड़ सड़कर मरगये। स्वार्थकी होली जलाकर, अपने देहकी आहुति देकर, इन लोगोंने महाराष्ट्रके नवयुवकोंमें देशभक्तिकी धधकती आग प्रज्वलित की।

* * *

इस दलका आत्मा अबतक वेही विनायकराव थे जिन्होंने अवस्थाके पन्द्रहवें वर्ष, भगूरमें देवीके सम्मुख एकान्तमें देशभक्तिकी प्रतिज्ञा की थी। नासिककी समस्त प्रकट संस्थाएं, एक ही दो वर्षमें, इनकी प्रमुखतामें काम करने लगीं। नासिकका शिवाजी उत्सव, नासिकका गणेशोत्सव, नासिकका मेला, नासिकके गीत, नासिककी वक्तृता, आदि नासिककी बातें समस्त महाराष्ट्रमें एक विशेष तेजस्विताके साथ चमकने लगीं। देशव्यापी स्वदेशी-बहिष्कार आन्दोलनका वह समय था। उक्त आन्दोलनका प्रचार और परिवर्द्धन करनेके लिए इन नवयुवकोंने अविश्रान्त परिश्रम किये। नवयुवक विनायकराव एकही दिनमें, तीन तीन सभाओंमें हजारों लोगोंके सम्मुख भाषण करते। उनकी हृदय-ग्राही वक्तृतासे श्रोतागण तल्लीन हो जाते और मन्त्र-मुग्धकी तरह डोलने लगते!

* * *

पाठ शालाकी परीक्षाओंमें विनायकराव कभी 'असफल' नहीं हुए। पठन-पाठनकी उन्हें अत्यधिक रुचि थी। मराठी साहित्यके

सभी इतिहास ग्रथ, उन्होंने कई बार पढ लिये थे। उन दिनों बडौदासे 'राष्ट्र-कथा-माला' नामकी पुस्तकमाला निकला करती थी, उसकी समस्त पुस्तकें और अन्य ऐतिहासिक ग्रथोका उन्होंने अध्ययन किया और ससारके पुरातन देश—बैबिलोनिया आदिसे लेकर आजतकके सभ्य देशोंके इतिहासका सम्यग् ज्ञान प्राप्त कर लिया। इसी तरह मराठीके विख्यात कवि मोरोपत, वामनपडित, रामदास, मुकेश्वर आदिके काव्योका परिचय उन्होंने इतना अधिक प्राप्त कर लिया था कि वे इन कवियोंकी तुलना करने वाले सुदर भाषण बडी बडी सभाओमे कर सकते थे। मोरोपन्त की कई 'आर्या' उन्हें मुखोद्गत थीं। नासिक, कर्जत आदि स्थानोंके वक्तृत्वोत्तेजक सभाओंमे, अवस्थाके १५ वें वर्ष ही, उन्होने प्रथम पारितोषिक प्राप्त किये थे। उसी अवस्थामे, नासिकके स्थानीय समाचारपत्रोमे तथा पूनेके "काल" साप्ताहिक पत्रमे वे लेख लिखा करते थे। तत्कालीन समाचार पत्रोमें, उन्हें 'काल' बहुत प्रिय था।

※ ※ ※

सन १९०१ में विनायकराव मैट्रीक्युलेशन की परीक्षामें उत्तीर्ण हुए और पूनेके फर्ग्युसन कालेजमें दाखिल हुए। शीघ्रही वहाके होस्टेलमें नित नयी घटनाएं होने लगीं। एकही सिद्धान्त, एकही उद्देश्य, और परस्पर स्नेह रखनेवाले नवयुवकोंको उन्होंने एकत्र किया और कालेजकी प्रत्येक सस्थाको अपनी तेजस्विताके हाथमें ढालना शुरु किया। रेसीडेन्सी (होस्टेल) के नवयुवक "सावरकरकैम्प"में दाखिल होनेमें अपना अहोभाग्य समझने लगे।

कालेजका डिबेटिंग क्लब, भोजन क्लब, सम्मेलन, ग्रंथालय, सभी संस्थाएं सावरकर कैम्पके अधिकारमें आगयीं और उनमें रातदिन स्वतन्त्रता और देशभक्तिका उपदेश दिया जाने लगा। भोजन-क्लबका एक साप्ताहिक समाचार पत्र भी शुरू हुआ और उसमें सावरकर कैम्पके लोगोंके देशभक्ति, साहित्य, विज्ञान, कविता और विनोद आदि विषयोंपर सुन्दर सुन्दर लेख आने लगे इस हस्त लिखित समाचार पत्रके कई लेख पूनेके विख्यात पत्रोंमे प्रकाशित होते थे। डिबेटिंग क्लबमें, सावरकर कैम्पके युवक, अनक देशोंके स्वतन्त्रता-सम्पादनके प्रयत्नोंपर चर्चा करते। आगे चलकर चर्चाका विषय बना हुआ और आज भी कई लोगोंको याद आने वाला, "राष्ट्रीय सप्तपदी" नामका व्याख्यान सावरकर ने इसी भोजन-क्लबमें दिया था। परतन्त्र लोगोंको, स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए जिन सात अवस्थाओंमेंसे जाना पडता है, उनका विशद वर्णन, अनेक ऐतिहासिक प्रमाणोंके साथ सावरकरने इस व्याख्यानमें दिया था। भोजन-क्लबमें श्री छत्रपति शिवाजी महाराजका एक बडा चित्र रखा गया था और प्रति शुक्रवारको, उक्त चित्रकी पूजा की जाती और आरती उतारी जाती। 'आरती'के पद्योंके रचयिता स्वय सावरकर ही थे, अतएव उनकी उत्तमताके लिए कुछ लिखनेकी आवश्यकता नहीं। मराठीमें होने पर भी, हम उक्त आरतीको यहां उद्धृत करनेका मोह सवरण नहीं कर सकते —

* * *

श्री शिवरायाची आरती।

आर्यांच्या देशावरि म्लेच्छांचा घाला।
आला आला सावध हो शिव भूपाला॥

सद्गदिता भूमाता दे तुज हाकेला।
करुणारव भेदुन तव हृन्य न का गेला॥
जयदेव जयदेव जय जय शिवराया।
या या अनन्य शरणा आर्या ताराया॥१॥

* * *

श्री जगदंबा जीस्तव शुभादिक भक्षी।
दशमुख मर्दुनि जी श्री रघुविर सरक्षी॥
ती पूना भूमाता म्लेच्छा ही छळिना।
तुजविण तिज शिवराया कोण दुजा त्राता॥२॥

* * *

त्रस्त अम्हीं दीन अम्हीं शरण तुला आलो।
परवशतेच्या पाशीं मरणोन्मुख झालो॥
साधु परित्राणाया दुष्कृति नाशाया।
भगवन्! भगवद्गीता सार्थ कराया या॥३॥

* * *

ऐकुनिया आर्यांचा धावा महिवरला।
करुणोक्तें स्वर्गी श्रीशिवनृप गहिंवरला॥
देशास्तव शिवनेरी घेई जन्माला।
देशास्तव रायगडीं ठेवी देहाला॥
देश स्वातन्त्र्याचा दाता जो झाला।
बोला तत् श्रीमत् शिवनृपकी जय बोला॥४॥

भावार्थ—"शिवाजी महाराज ! इस आर्य देशपर, म्लेच्छोंका आक्रमण हो रहा है, इस लिए आप सम्हल जाइए । यह भू-माता, गदगद् कण्ठसे आपको पुकार रही है, क्या उसका करुण-क्रन्दन आपके हृदयतक नहीं पहुंचा ? शिवाजी, आपकी जय हो । अनन्य शरण इन आर्योंके उद्धारके लिए शीघ्र आइए । जिस पवित्र भू-माता के लिए श्रीजगदम्बाने, शुम्भादि दानवोंका भक्षण किया था, जिसकी रक्षाके लिए रघु वीरने दशमुख रावणका मर्दन किया था, वही भू-माता आज म्लेच्छों द्वारा सताई जा रही है । शिवाजी ! आपके सिवा उसका उद्धार-कर्ता अन्य कौन है ? हम सताये जा चुके हैं, दीन हो चुके हैं, पराधीनताके बन्धनमें फसे हुए मरणोन्मुख हो रहे हैं । हम आपकी शरण हैं । साधुओंके परित्राणके लिए, हे भगवन् ! भगवद्गीताको सार्थ करनेके लिए, आप शीघ्र आइए । इस आर्य देशके निवासियोंकी पुकार सुनकर, यहाँका करुण क्रन्दन देखकर श्री शिवाजीका कण्ठ, स्वर्गमें अवरुद्ध हो गया । देशके लिए उन्होंने शिवनेरी गढपर जन्म लिया और देशहीके लिए रायगढ किलेमें देह विसर्जन किया । देशको जिसने स्वतन्त्रता दिलाई, उस श्रीशिवाजीकी जय बोलो !"

*　　*　　*

विनायकरावकी यह कविता उस समयकी है जिस समय वे कालेजमें पढ़ते थे । वीर-पूजाके भावोंसे उस समय विनायकरावका हृदय कितना भरा हुआ था, उसका यह एक छोटासा नमूना है ।

तृतीय अध्याय।

फर्ग्युसन कालेज और पूनेका जीवन।

अपनी अद्वितीय आकर्षकतासे, विनायकरावने कालेजके लड़कोंका ध्यान ऐशोआराम, टेनिस, ताश, सिगरेट, आदि अनेकानेक बातोंके कीचड़से निकालकर देशभक्ति, विद्वत्ता वक्तृत्व, आदि उज्ज्वल सद्गुणोंकी ओर लगाया। आगे चलकर विनायकरावने इन समान-ध्येय समान-रूप, समान-विचार विद्यार्थियोंका संगठन करना शुरू किया। विनायकराव अच्छी तरह जानते थे कि बिना संगठनके इधर उधर पड़े हुए अनेकों सामर्थ्य-शाली आदमियोंकी अपेक्षा संगठित आदमियोंकी थोड़ी संख्या बहुत कार्य कर सकती है और इसी लिए, जहां कहीं वे गये, आस पासकी जन-सामग्रीका संगठन करते रहे। फर्ग्युसन कालेजमें भी उन्होंने संगठन आरंभ किया। फर्ग्युसन कालेजके सामने जो टेकडी है, वही इनका मुख्य सभा-स्थान था। जिस समय सावरकरके अन्य कई सह-पाठी अपनी फूलती हुई जवानीके दिन ऐशोआराममें वृथा खर्च करते थे, उसी समय सावरकर और उनके अनुयायी, इस टेकडीपर एक छोटेसे शिव-मन्दिरमें, देशभक्तिके जलसे सु-स्नात होकर स्वतंत्रताकी उपासनाके लिए सर्वस्वका बलिदान करनेका निश्चय करते थे। इस टेकडीपर, अपने निश्चयों और उद्देश्योंकी सिद्धिके साधनोंका

विचार करनेमें दत्तचित्त होकर बैठे हुए दे कई बार दिखाई देते थे। इस एक-जीव एक रस सावरकर कैम्पमें एक प्रकारकी अज्ञात आकर्षकता थी, जिसके कारण नये तेजस्वी, मेधावी, नवयुवक इनके कैम्पमें आते। वहां नाना प्रकारके विषयोंपर विद्वत्तापूर्ण भाषण होते अपनी अमोघ रसवन्तीसे और हृदयको हिला देनेवाले वक्तृत्व से, सावरकर, इन युवकोंके मन पटपर, पूर्वकालीन इतिहास एवं वर्तमान कालीन हीन स्थितिका सच्चा चित्र अंकित कर देते थे। कभी कभी ये लोग आसपासके किले देखनेके लिए भी जाते। एक बार ये लोग सिंहगढपर गये, वहां सावरकरने वीरवर तानाजीके चरित्रपर एक प्रभावशाली भाषण दिया। वह भाषण इतना मर्मस्पर्शी था कि उनके एक मित्रको आज भी वह शब्दशः स्मरण है।

* * *

फर्ग्युसन कालेजमें इस तरह गडबड मच रही थी। यह असंभव था कि कालेजके सचालकोंसे यह बात छिपी रहे। पहिले साल ही अध्यापक मंडली, सावरकरपर 'सन्देह' करने लगी। दूसरे साल अध्यापकोंको उनसे भय मालूम होने लगा, और तीसरे साल तो वे सावरकरका 'सादर द्वेष' करने लगे। द्वेषके साथ आदर इस लिए लगा हुआ था कि सावरकर कैम्पके सभी नवयुवक परीक्षाओंमें अवश्य ही 'पास' होते थे। व्यायाम खेल, भाषण, सच्छीलता, पीडितोंकी सहायता, आदि सभी सद्गुणोंमें इस कैम्पके आदमी आगे रहते थे। वे एक ही तरहका वेष पहनते और वह स्वदेशी ही हुआ करता। उनकी परस्पर मित्रता गहरी थी, एक दूसरेके लिए जान देनेके

लिए तैयार रहते थे। अगर इन लोगोंमें कोई बुराई थी, तो वह यह थी कि इनमें देशका अभिमान इतना ओतप्रोत भरा हुआ था कि उसे कालेजके प्रोफेसर्स सह नहीं सकते थे। अपनी देशभक्तिको कार्यरूपमें परिणत करनेकी उत्कट लगन इन लोगोंमें थी, जिसके कारण सावरकर पर प्राय सभी संचालकोंकी दृष्टि रहती थी। प्रोफेसर पटवर्धन कहा करते थे—" He is bound to be a great demagogue" (वह अवश्य ही एक बड़ा आन्दोलनकारी लोकनायक होगा)

※ ※ ※

यह बात असम्भव थी कि सावरकर कैम्पका प्रभाव केवल कालेज रसीडेन्सीमें ही रुका रहे। सावरकर प्राय कहा करते थे कि कालेजमें महाराष्ट्रकी भावी पीढीके नेता एकत्र होते हैं, अतएव उनके विचारोंकी दिशा बदलना, मानों समस्त महाराष्ट्रका भविष्य निर्माण करना है। कालेजके नवयुवकोंसे वाद-विवाद करनेमें उनका बहुतसा समय खर्च होता था, तथापि पूनाके सार्वजनिक जीवनमें भी वे सम्मिलित हुआ करते थे और समान-विचारवाले आदमियों को एकत्र करते रहते थे। ऐसे ही एक अवसर पर, एक स्वदेशी प्रचारकी सभामें यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि इस समय जो विदेशी कपड़ा लोगोंके पास है, उसका क्या किया जाय। सावरकरने तत्काल खडे होकर कहा कि उस कपड़ेकी अभी होली करके, किये हुए पापोंका प्रायश्चित किया जाय।

※ ※ ※

सावरकरका यह कथन, पूनेके एक नेताके सिवाय और किसीको पसद न पडा। पसद करनेवाले नेता थे, प्रोफेसर शिवरामपत पराजपे। सावरकरने दो तीन अन्य प्रभावशाली पुरुषोंसे बातचीत की, उन्होंने भी इनका प्रस्ताव पसद किया और कहा कि यदि कमसे कम आधी गाडी कपडे एकत्र हो सकें तो हम तुम्हारा कहना मान सकते हैं। सावरकरने इतने विदेशी कपड एकत्र कर देनेका विश्वास दिलाया और वे अपने कैम्पके युवकोंमे आये। पूनेके विद्यार्थियोंकी दो सभाए की गयीं। सावरकरकी वक्तृत्व शैलीका पूनमें खूब नाम हो चुका था। प्रमुख वक्ताके स्थानपर उनका नाम देखकर हजारों आदमी व्याख्यान सुननेके लिए आये। व्याख्यानके पूरे रगमे, सावरकरने लोगोंसे कहा "अपने अपने शरीरसे विदेशी कपडे उतारकर फेंक दो। उन कपडोंको तथा उन्हें पहननेकी हमारी आदतको, आज हमें जलाकर खाक कर डालना है।" इस वाक्यको सुनते ही किसीने अपनी टोपी फेंकी, किसीने उपरना फेंका, किसीने कोट फेंका, किसीने कुरता—जिसके पास जो विदेशी कपडा था, वह उसे निकाल कर फेंकने लगा। बातकी बातमें एक पुरुष ऊंचा विदेशी वस्त्रोका ढेर एकत्र हो गया! जिनके दिलमें लोगोंकी तैयारीका सन्देह था, उनका सन्देह गया। एक नेताने उस समय कहा, "परन्तु आर्थिक दृष्टिसे इस कार्यसे हानि है।" सावरकरने तत्काल व्याख्यान-मञ्चसे ही उत्तर दिया—" पर, नैतिक दृष्टिसे इसमें लाभ है। इन विदेशी वस्त्रोको जलते देख, हृदयके भीतर देशभक्तिकी जो उज्वल ज्योति प्रज्वलित होगी, उसका नैतिक परिणाम और लाभ इस हानिसे कई गुना अधिक होगा।"

* * *

विदेशी वस्त्रोंका वह ढेर गाडियोंपर लादा गया। उस पर गुलाल छिटका गया, और बाजोंके जुलूस में उसकी 'सवारी' निकाली गयी। "मरीमाता'(हैजेकी बीमारी) की 'सवारी' जिस तरह गावोंमें निकाली जाती है, वही दृश्य था। जुलूस न मार्केट से निकलकर, लकडी पुलक पर पहुँचा। वहाँ खेतों में सावरकर-मण्डल क लोग तैयार ही थे। तत्काल उन्होंने कपडों की होली रची। बीचमें लोकमान्य भी उस जुलूस मे शामिल हो गये थ। 'काल'-सम्पादक प्रोफेसर पराजपे शुरुसे ही साथ थे। सावरकरने कहा -होली जलाकर, उसक चारो और गोलाकार मण्डल बाधकर, भाषण होना चाहिए। लोकमान्यने कहा, जो कुछ किया गया है, वही पर्याप्त है। उधर 'होली' जलाइए, भाषण इस तरफ ही होने दीजिए। पर सावरक' कब माननवाले थे? कहने लगे कि—"तब यहीं तक आनेकी भी क्या आवश्यकता थी। उधर 'रेमार्केट' में भाषण होते रहते, इधर इस स्थानपर होली जलती रहती" विदेशी वस्त्रोंके इस प्रचण्ड ढेरकी जलती ज्वालाओंके सन्मुख, हृदयकी भावनाओंको प्रज्ज्वलन करनेवाले भाषणक होनेसे, होलीका दृश्य परिणाम हृदयपर अंकित हो जायगा।" लोकमान्यने सावरकरका कहना मान लिया। प्रा० शिवरामपत पराजपेने हृदयग्राही भाषण दिया। लोकमान्यका भी उत्साह-वर्धक भाषण हुआ। रातके ८ बजे लोकसमूह वापिस घर आया। लोकमान्यने सावरकरसे कहा, "जरा सम्हले रहना, पुलिस खीज गयी है। सामने घास की गजिया लगी हुई हैं। कहीं ऐसा न हो कि उनमें चिनगारी लगा दी जाय और कहा जाय कि होली-वालोंने घासमें आग लगा दी।" सावरकरने कहा, 'होलीकी पूरी

तरह शान्त करके ही हम घर लौटेंगे, आप चिन्ता न करें।' उस रातको सावरकरने अपने दो मित्र उस स्थानपर पहरा देनेके लिए नियुक्त किये और कपडे जलकर खाक हो जानेपर, पानीसे उस राखको बहाकर, पहरदार घर लौटे।

* * *

हिन्दुस्थानमें, विदेशी वस्त्रोंकी जलाई हुई पहली होली यही थी। अमृतबजार पत्रिका बगाली, हिन्दू आदि दूरदूरके पत्रोंके कालम, इसके प्रकाशसे प्रकाशित हुए थे। टीका-टिप्पणियोंका धूआ तो इस होलीसे एक महीने तक निकलता रहा।

* * *

इधर सावरकर कालेज-रसीडन्सी मे आये। उन्होंने देखा कि वहा भी एक होली प्रज्वलित हो रही है। यह होली विदेशी कपडों की नहीं थी, वरन सञ्चालकों की शान्तिकी थी। थोड ही दिनो बाद, प्रिन्सिपल परांजपेने सावरकर को, स्वदेशी आदोलन में भाग लेने तथा विदेशी-वस्त्र-होली का सचालन करनेके अपराध में रसीडेन्सीसे, 'रस्टिगेट' कर दिया—बाहर निकाल दिया! दश रुपये जुर्माना भी उन्हें किया गया। उस समय सावरकर कालेज की "टेस्ट" परीक्षामें पास होकर यूनिवरसिटी की बी ए. परीक्षाके लिए आवेदनपत्र भेज चुके थे। उनका नियम था कि सारा वर्ष स्वदेशभक्ति के प्रचार-कार्यमें खर्च करते, और परीक्षासे पहले दो महीनों में कसकर अध्ययन करते। आवेदनपत्र रवाना हो चुकनेपर

'रस्टिगेट' की आपत्ति उनपर आई। उनको दिये गये दण्डके कारण शायद विश्वविद्यालय उन्हें परीक्षामें सम्मिलित न होने दे! शायद आगेके जीवन का रंग ही बदल जाय! शायद, स्वकुटुम्बियों विद्याप्राप्ति मे व्यय किये गये धनके साथ साथ आप्त-जनोंकी आगे तक की आशाएंभी नष्ट हो जायँ! पर, प्रिन्सिपल परांजपेकी आज्ञा तो थी कि शामतक रेसीडन्सी छोड दो!

* * *

सावरकर रेसीडेन्सी छोडकर चल दिये। उनके पश्चात् रसीडन्सीमें लगाये हुए श्रीशिवाजीके चित्र निकाल लिये गये, हस्त लिखित साप्ताहिक समाचार पत्र बंद कर दिये गये। पुराने जमानेमे जिस तरह युध्यमान दल अपने दुश्मनोंकी छावनी लूट लेता था, उसी तरह सावरकर कैम्प लूट लिया गया और नष्ट भ्रष्ट किया गया।

* * *

हिन्दुस्थानके स्वदेशी आन्दोलनके लिए बलि जानेवाले पहले विद्यार्थी सावरकर ही थे। बम्बईके 'इन्दुप्रकाश'ने लिखा था कि "इन्हें जो दण्ड दिया गया है, उचित ही है।" He was an ill tongued messenger of extremism from the very start' प्रारम्भसे ही उसकी जबान गरम दलकी अशुभ ज्वलजिव्हा थी।"

चतुर्थ अध्याय।

'अभिनव भारत'की स्थापना।

फर्ग्युसन कालेजके सञ्चालकोंके इस कार्यका जवाब 'केसरी' ने दिया। 'ये लोग हमारे गुरु नहीं है' शीर्षक लेखमें कालेज सञ्चालकोंकी खूब खबर ली गयी। प्राय सभी नरम दलके पत्रोंने लिखा कि विद्यार्थियोंको राजनीतिमें प्रत्यक्ष भाग न लेना चाहिए। गरम दलके सभी पत्रोंका मत इसके विपरीत था, उन्होंने सावरकरजीका समर्थन किया। सावरकरजीके जुर्मानेकी रकमके लिए चन्दा किया गया। उन्होंने उसमेंसे दश रुपये लिये और शेष 'पैसाफंड' को दे दिये। इन सब झंझटोंमें अध्ययन कर वे बी. ए. की परीक्षामें 'पास' हुए। उनकी सफलता पर महाराष्ट्रके अनेक आदमियोंने उन्हें बधाई दी।

* * *

बी. ए होते ही उन्होंने प्रचार कार्य अधिक उत्साहसे शुरू किया। उनकी कविताएं इस समय महाराष्ट्रमें लोगोंकी जबान पर रहती थीं। उनके बनाये हुए सिंहगढ तथा बाजी देशपाण्डेके 'पोवाडे' (वीर-गीत) आज भी कई महाराष्ट्रियोंके जबानपर हैं। उनकी वक्तृताकी प्रशंसा दूर दूर तक फैल चुकी थी। नगर,

पूना, बम्बई, डहानू, कल्याण आदि स्थानोंमें उन्हें भाषण देनेके लिए निमंत्रित किया गया था। सरकारी रिपोर्टोंमें लिखा है कि "जहां जहाँ वे जाते, वहां अपने व्याख्यानों और सभाओंके साथ साथ गुप्त सभाओंकी शाखाएँ भी फैलाते रहते थे।" उस समय खबर उठी थी कि इन रिपोर्टोंपरसे सावरकरजी पर वारंट निकला है।

※ ※ ※

वारंटकी प्रतीक्षा करते हुए सावरकरजी एल. एल. बी की पढ़ाईके लिए, सन १९०६ में बम्बई गये। वहाँ उनके मनमें विचार आया कि महाराष्ट्रकी भावी पीढ़ी जिस तरह कालिजमें एक ही साथ बदली जा सकी उसी तरह हिन्दुस्थानके भावी नेताओंको बदलनेका यदि कोई स्थान है, तो वह लंदन है। वहाँ समस्त हिन्दुस्थानके बुद्धिवान एवं धनवान नवयुवक एकत्र होते हैं और वहाँसे लौटकर हिन्दुस्थानमें वे समाजके नेता बनते हैं। अत एव इस अत्युच्च स्थानसे प्रकाश डालनेसे उसकी किरणें आसपास अनायास ही फैलेंगी। इसके सिवाय यूरोपियन क्रांतिकारी तथा अन्य संस्थाओंको देखने और उनके साधन समझने या एकत्र करनेका भी अवसर मिलेगा। अपनी संस्थाके अखिल भारतवर्षीय कार्य-क्रमको पूरा करनेके लिए सावरकरजी लंदन जानेका इरादा करने लगे। इन्हीं दिनों श्रीयुत श्यामजी कृष्णवर्माने अपने "इंडियन सोशिअलिस्ट" पत्रमें प्रकाशित किया कि विदेश जानेवाले विद्यार्थियोंकी सहायताके लिए स्कालरशिप-शिष्यवृत्तियां-दी जायँगी। सावरकरजीने इस वृत्तिके पानेके लिए प्रार्थना पत्र भेजा और लोकमान्यजी तथा प्रो० पराजपेने उनकी

सिफारिश की। थोडे ही दिनों बाद सावरकरजीको 'शिवाजी स्कालरशिप' मिली और लंदन जानेका उनका विचार निश्चित हुआ।

* * *

इस बीचमें, स्वदेशी-प्रचारमें ध्यान देनेवाले, अगम्य गुरु नामके एक स्वामी पूनेमें आये और उनके भाषण होने लगे। उन्होंने पूनाके विद्यार्थियोंसे कहा कि तुम्हारे संगठनके लिए तुम्हारे किसी नेताको मेरे पास भेजो। पूनेके विद्यार्थियोंने प्रो० परांजपेके नामसे सावरकरजीको बंबई तार दिया। तार पाकर सावरकरजी पूने आये। विद्यार्थियोंकी सभा हुई। उसमें सावरकरजी चुने गये और अगम्य गुरुके पास भेजे गये। गुरुजीने इधर उधरकी कुछ बातें बताई और 'फिर देखेंगे' कहकर गुरुजी उठकर चल दिये। अगम्य गुरुका यही प्रथम एवं अंतिम परिचय था। इस साधारण घटनाके लिखनेका प्रयोजन यह है कि रौलट रिपोर्टमें पुलिसकी यह 'खोज' दर्ज है कि अगम्य गुरुने सावरकरको राजनीतिकी शिक्षा और लौकिक महत्व दिया। सावरकरजीने रिपोर्टकी यह बात जब पढ़ी तब वे खूब हँसे।

* * *

इस घटनाका उल्लेख एक और कारणसे किया गया है। उक्त सार्वजनिक सभामें इक्कीस वर्षकी आयुवाले सावरकरजीने जो भाषण दिया था, वही पूनेमें उनका अंतिम भाषण था। उस भाषणके विषयमें पुलिसके स्पेशल रिपोर्टरोंने कहा है—" It was so devte-

rous! So triumphant! He is at the most twenty two, but he is already an accomplished orator of an enviable rank" (उसका भाषण चतुराईसे भरा हुआ और विजयपूर्ण था। उसकी आयु अधिकसे अधिक २२ वर्षकी है, पर इस अवस्थामें ही वह सधा हुआ वक्ता है और लोग उसकी इज्जत करते हैं।) इस भाषणके पश्चात सावरकरजी पूनेके लोगोंके सम्मुख भाषण न दे सके।

※ ※ ※

बम्बईमें वे ५-६ महीने रहे। उतने ही दिनोंमें उन्होंने कालेजमें अपने तत्वोंका प्रचार किया, चालोंमें सभाएं की और अपने दलका 'विहारी' नामका पत्र चलाया। ज्योंही उनके लेख "विहारी" में आने लगे त्योंही उस पत्रकी ग्राहक सख्या हजारोंसे बढ गयी। इसी समय इंग्लैण्ड जानेका उनका निश्चय हुआ। रवाना होनेके पूर्व अपने सहकारियोंकी सावरकरजीने एक सभा की। उनकी सस्थाका नाम "अभिनव भारत" रखा गया था जिसकी स्वतन्त्रता की जयध्वनिसे सारा महाराष्ट्र गूज उठा।

पंचम अध्याय

विलायत यात्रा और आंदोलन।

हिन्दुस्थानकी जयध्वनिसे लंदन-स्थित हिन्दुस्थानी नवयुवकोंको मंत्र-मुग्ध करने तथा हिन्दुस्थानके आंदोलन की लहर विलायत तक पहुंचाकर यूरोपीय राष्ट्रोंमें हिन्दुस्थानकी आकांक्षाओं और कर्तव्य-शीलताका प्रचार करने और अपने कार्य की प्रसिद्धिके लिए बंबई छोडकर, सावरकरजी लंदन गये। उनके भाईने, पत्नीने, अनुयाइयोंने और मित्रोंने उनको इस आशासे पहुंचाया कि वे शीघ्रही वापिस आवेंगे। पर, इन सभी आप्त जनोंकी आशाओंका जहाज कर्तव्य की कठोर चट्टानोंसे टकरा कर चकनाचूर होने को था।

* * *

इंग्लेण्ड पहुंचते ही, एक दिन भी व्यर्थ नष्ट न करते हुए, सावरकरजीने अपना कार्य शुरु किया। प्रवासके दिनोंमें, जहाजपर भी, उनका कार्य जारी था। जहाजपर जो हिन्दुस्थानी विद्यार्थी उन्हें मिले, उन्हींसे सावरकरजीने अपना यूरोपीय कार्यक्रम शुरु किया। और यह कार्यक्रम उन्होंने ४ वर्षतक रातदिन-अक्षरशः रातदिन-चलाया। कार्यक्रमकी अनेक बातें 'अभिनव भारत'की गुप्त

मंडलीमें निश्चित होती थीं और वहीं उनपर अमल भी होता था, इस लिए वे बातें अभीतक अप्रकट हैं। हिन्दुस्थानके स्वतन्त्र होनेतक शायद, ये बातें अंधकारमेंही पड़ी रहेंगी। जिस दिन भारत वर्षमें स्वतन्त्रताका झंडा फिरसे फहराने लगेगा—और यदि समयको स्मरण रहा तथा कहने वालाभी कोई बच रहा तो—उस दिन मालूम होगा कि परतन्त्रताकी राक्षसी निशामें, भारतके इस अनन्य भक्तने, तथा उसके अन्य समर्थ सहायकोंने शृंखलाबद्ध भारत तथा उसके निवासियोंकी मुक्तिके लिए, कौनसे भयंकर, सौम्य, धार्मिक अधार्मिक, भले बुरे, उपायोंकी योजना की, और किस तरह स्वार्थ, स्वजन और स्वप्राणकी चिंता न करते हुए, एकमात्र उद्देश्यको सम्मुख रखकर, बचपनकी वाचिक प्रतिज्ञाएं, अपनी कृतिसे अक्षर अक्षर सत्य कीं!

* * *

इतना अवश्य सत्य है कि, जिस दिन सावरकरजी इंग्लैण्डके किनारेपर उतरे उसी दिनसे वहांके हिन्दुस्थानी नवयुवकोंमें इतनी विलक्षण क्रांति होने लगी कि विलायत सरकारको इनपर सख्त निगरानी रखनी पड़ी। 'लंदन टाइम्स' जैसे पत्र इस नवयुवकको—जिसकी मूंछें भी पूरी तरहसे नहीं निकल पायी थीं—अपना प्रतिद्वंद्वी समझकर, उनपर अग्रलेख लिखकर, आक्रमण करने लगे। सन १८५७के स्वतन्त्रता-प्राप्तिके प्रयत्नका अर्द्ध-शताब्दि उत्सव सावरकरजीने लंदनमें मनाया, जिसकी वजहसे मामला और भी बढ़ गया। सावरकरजीके "इंडिया हौस"के सम्मुख लंदन पुलिसने अपना अड्डा

जमाया। पुलिस कहने लगी कि उक्त 'इण्डिया हौस' में गुप्त रीतिसे बम बनानेकी शिक्षा दी जाती है। रौलट रिपोर्ट तथा पुलिसकी रिपोर्टोंका कहना है कि 'अभिनव भारत' संस्थाकी प्रकट रूपसे होने वाली 'फ्री इंडिया' नामकी सभाओंमें अनेक राष्ट्रीय विषयोंपर विद्वत्ता-प्रचुर, वक्तृत्वपूर्ण भाषण देकर सावरकरजी युवकोंको बौद्धिक शिक्षा देते थे और रात्रिक समय, अभिनव भारतकी गुप्त सभामें बम बनानेकी रासायनिक क्रिया बतलाते थे। लंदनमें हिन्दुस्थानियोंके हाथसे चलने वाले गुप्त छापेखाने हैं, उनमेंसे स्वतंत्रता-प्राप्तिके उद्देश्यको बतलाने वाले क्रांतिकारी साहित्यकी सहस्रों पुस्तकें और पत्र छपते हैं और हिन्दुस्थानमें गुप्त रीतिसे बांट जाते हैं। लंदनमें, सावरकरजीका परिचय उन लोगोंसे भी बढ़ता गया जो अपने अपने देशकी स्वतंत्रताके लिए प्रयत्नशील थे। रशिया, आयर्लैण्ड, इजिप्त, तरुण तुर्क, तथा चीनके कई देशभक्त लंदन आनेपर सावरकरजीसे अवश्य मिलते थे। इस तरह इनका परिचय दृढ़ होता जाता था। 'गैलिक अमेरिकन' तथा 'अमेरिकन पुर्तगाल' आदि पत्रोंमें 'विनायक' के नामसे जो लेखादि निकलते थे, कहा जाता है कि, वे इन्हींके लिखे हुए होते थे। स्व० दादाभाई द्वारा स्थापित "लंदन इंडियन सोसायटी" पर अनेक दांव घातोंके बाद, सावरकरजीने अधिकार जमा लिया। विलायतसे हिन्दुस्थानमें अनेक पर्चे प्रत्येक विलायती डाकसे आते थे और हिन्दुस्थानके भिन्न भिन्न भागोंमें उनका इतना प्रचार होता था कि बंबई सरकारको उन पर्चोंपर निगाह रखनेके लिए एक स्वतंत्र विभाग कायम करना पड़ा, पर फिर भी उन पर्चोंका प्रचार होता ही रहा। विलायतकी

पुलिस और समाचारपत्र अब खुल्लम खुल्ला कहने लगे कि ये समस्त पर्चे सावरकरजी द्वारा ही लिखे और प्रचारित किये जाते हैं।

* * *

सावरकरजीसे भेंट करनेके लिए अनेक समाचार पत्रोंके प्रतिनिधि आने लगे और उन्होंने उनकी 'मुलाकात' का हाल अपने पत्रोंमें प्रकाशित करनेका क्रम जारी किया। कहा जाता है कि कभी कभी इन 'मुलाकातों' में बड़ी कुतूहल पूर्ण बातें होती थीं। एक दिन किसी प्रभावशाली समाचार पत्रका प्रतिनिधि सावरकरजीसे मिलने आया। सावरकरजीके मकानकी अंग्रेजी दासीने उसे 'वेटिंग रूम' में बैठाया और उसके नामका कार्ड लेकर सावरकरजीके पास गयी। सावरकरजी उस समय पास ही बैठे हुए अपनी डाक देख रहे थे। पत्रप्रतिनिधिने दासीको इशारेसे बुलाकर कहा कि, 'मैं मि० सावरकरसे मिलने आया हु, वे कहा है ?' दासीने उंगलीके इशारेसे बतलाया कि 'वे ही तो हैं, अभी आपसे बात करनेके लिए यहा आवेंगे।' दासीकी इस बात पर पत्र-प्रतिनिधिको विश्वास न हुआ। उसने सोचा कि दासी उसकी मखौल उड़ा रही है। इतनेमें अपने पत्रादि देखते देखते सावरकरजी वहा आये। अभिवादन-हस्तादोलन होने लगा। तब पत्र-प्रतिनिधिने बड़ी गम्भीरताके साथ पूछा, 'सचमुच ही आप, मि० सावरकर हैं ?' सावरकरजीने कहा, 'आप विश्वास रखें, सावरकर नामका आदमी मैं ही हु !' प्रतिनिधि आश्चर्यान्वित होकर कहने लगा, 'तब तो आपकी आयु और शरीरकी ऊंचाई आदिके सम्बन्धमें हमारा खयाल बिलकुल गलत था।' सावरकरजी हँस

कर बोले, 'तब तो आपकी इस निराशाके लिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ।' प्रतिनिधि भी हँसकर कहने लगा, 'महाशय, हमारे पत्रको आजतक यह बात नहीं मालूम थी कि यह एक ऐसे युवकका विरोध कर रहा है, जिसके मूछ की रेखा भी अभी नहीं बन पायी है।' सावरकरजीने बातको टालते हुए कहा, 'अब तो आप जान गये हैं? अब भी मेरा विरोध करना छोड़ेंगे?' पर, इस पत्रका विरोध ज्यों का त्यों कायम रहा। बॉटमनेसे प्रकाशित 'जानबुल' पत्रने कई बार सावरकरजीको सींग मारनेका प्रयत्न किया। 'डेली न्यूज' और 'मैंचेस्टर गार्डियन' यद्यपि सावरकरजीके किंचित विरोधी थ, पर फिर भी व इनके विषयमें गम्भीर एवं मार्मिक लेख लिखा करते थे।

☆ ☆ ☆

इधर लंदनमें 'अभिनव भारत'का यह क्रम जारी था उधर हिन्दुस्थान के पत्रों में भी सावरकरजी लेख भेजते थे। पूनेके 'काळ' में तथा बम्बईके 'विहारी' में लन्दनकी चिट्ठियां उस समय प्रकाशित हुई थीं, व आज भी मराठी पाठकों को स्मरण हैं। इंग्लैण्ड पहुंचकर, चार मास बादही उन्होंने जोसेफ मैजिनीके आत्मवृत्तका मराठी अनुवाद प्रकाशित किया। इस पुस्तकने महाराष्ट्रमें खलबली मचा दी। सहस्रों नवयुवक उक्त पुस्तककी सावरकरजी द्वारा लिखित भूमिकाको पढने लगे। पालकीमें रखकर धर्म-ग्रन्थोंकी जिस तरह 'सवारी' निकाली जाती है, उसी तरह इस ग्रथके भी जुलूस निकाले गये।

तत्कालीन मराठी समाचार पत्रोंमें सावरकर कृत मेजिनी चरित्रपर अग्रलेख लिखे गये। आखिर इस तरहकी लोकप्रिय पुस्तकको मिलनेवाला प्रथम पारितोषिक इस पुस्तकको भी मिला। सरकारने वह पुस्तक जप्त कर ली और इसी लिए कई नवयुवकोंने उक्त पुस्तककी भूमिकाको, वैदिक ऋचाओंकी तरह, मुखाग्र कर लिया।

× ※ ※

जोसेफ मैजिनीके चरित्रके पश्चात् सावरकरजी सन १८५७ के 'स्वतन्त्रताके युद्ध' का इतिहास लिखने लगे। भोजनके पश्चात प्रतिदिन वे सरकारके पुराने कागज-पत्र देखा करते थे और लंदनके म्यूज़ियममें सायंकाल तक बैठा करते थे। यह पुस्तक लिखकर पूर्ण भी नहीं हुई थी कि छापे जानेसे पहलेही सरकारकी उसपर टेढ़ी निगाह पडी और वह जप्त की गयी! पुस्तककी हस्तलिपिभी पूरी नहीं हुई, छपने और प्रकाशित होनेकी बात तो दूर ही रही! पूरी तरहसे लिखे जानेके पहलेही जप्त होनेका सम्मान प्राप्त करनेवाली पुस्तक, समस्त संसारमें, शायद यही है! सावरकरजीने लंदन टाइम्समें इसी आशयका एक पत्र लिखा। कई लोगोंने पत्रोंद्वारा सावरकरजीकी बातका समर्थन किया और सरकारकी कार्यवाहीका निषेध। यह मराठी इतिहास तो जप्त हो गया पर उसका अंग्रेजी अनुवाद छपकर अप्रतिहत रूपसे सर्वत्र प्रचारित हुआ। इस पुस्तककी माग इतनी बढ़ गयी कि एक समय दक्षिण अमरिकामें पुस्तककी एक प्रति १५०) रुपयोंमें बिकी! पुस्तक-बिक्रीका मुनाफा सावरकरजीने सार्वजनिक कार्योंमें लगाया। इस पुस्तकके सम्बन्धमें,

सावरकरजी तथा समस्त कोंकणस्थ चित्पावन ब्राह्मणोंके कट्टर मित्र वेलटाइन शिरोल महाशय अपनी पुस्तक Indian Unrest में लिखते हैं कि:—"पुस्तकका रेखन-सौंदर्य, प्रगाढ-विद्वत्ता तथा सशोधकता जितनी आकर्षक है उतनी ही उसकी हठ-वादिता और मत-विपर्यास भी ध्यानमें रखने योग्य है।" शिरोल साहब अपनी नयी पुस्तक India—Now and Old मे सावरकरजीकी पुस्तकके उद्धरण देकर कहते हैं कि 'He was one of the most brilliant advocates of a later rebellion' (वह आगेके गदरका तेजस्वी समर्थक था।)

* * *

'स्वतन्त्रताका इतिहास' अंग्रेजीमें प्रकाशित हो चुकनेपर सावरकरजीने 'सिक्खोंका इतिहास' मराठीमे लिखा। मालूम होता है कि सावरकरजीकी कलम और कृष्ण-माता देवकीजीके गर्भ एकसादी थे। देवकीजीके गर्भकी तरह, इनकी कलमसे जन्म धारण करनेवाले ग्रंथ, जन्मसे पहले या बाद, विपक्षियोंकी क्रोधाग्निसे वेष्टित होकर, सेन्सर की शिलापर पटीटे जाकर, नामशेष कर दिये जाते थे! 'सिक्खोंका इतिहास' एक ऐतिहासिक ग्रंथ था पर उसके द्वारा सावरकरजीके नामका प्रचार होगा—इसी भयसे सेन्सरने पोस्ट आफिसकी पेटीसे ही उक्त ग्रंथको निगल लिया!

* * *

सावरकरजी इग्लैण्डमें चार वर्ष रहे। उनके समस्त कार्यों और आन्दोलनोंका इतिहास आज नहीं दिया जा सकता। उन

चार वर्षोंमें, एक क्षणभर भी वृथा खर्च न करके, रात्रिकी विश्रान्तिका समयभी काममें लगाकर हतभागिनी भारत माताके लिए उन्होंने जो जो साहस पूर्ण कार्य किये, जो जो स्व-सुखके होम किये उनको जाननेकी इच्छा होनेपर भी आज साधनाभावसे, उनका प्राप्त होना असम्भव है। ऊपर जितनी बातें कही गयी हैं, वे सागरमें बिंदुकी बराबर हैं। पिछले बीस वर्षोंमें अखिल महाराष्ट्र और अखिल भारतमे जितने कर्तव्य-शाली, चरित्रवान, स्वार्थत्यागी देशभक्त पैदा हुए और जिन्होंने भारत माताके लिए, अपने सुखोंके त्यागसे लेकर देह-त्यागतक, सब कुछ बलि करके दिखाया, उनमेंसे प्राय प्रत्येकका सम्बन्ध और अनेकोंकी स्फूर्ति सावरकरजीके अद्भुत सगठनके साथ थी। यह कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं है। जब कभी भारतीय स्वतन्त्रताका इतिहास प्रकाशित होगा, तब इन बातोंका पूरा पता चलेगा। अन्य हिन्दुस्थानी षड यत्र कारियोंको सरकारने माफी देकर मुक्त कर दिया, पर सावरकरजीपर अबतक सरकारकी कड़ी नजर बनी रही, इसका कारण असल ऊपर कथित घटनामें ही है। अब भी चौदह वर्षके कठिन-कारावासके अनतर, सरकार उन्हें समुद्रके खदकसे घिरे हुए रत्नागिरी जिलेमें बद रख रही है।

* * *

उनके विषयकी विलायतकी अनेक घटनाओंमेंसे एक दोका थोड़ा थोड़ा पता चला है, उन्हें हम यहाँ देते हैं। सन १९०९में सावरकरजी बैरिस्टरीकी परीक्षा पास कर चुके थ। इतने बड़े

राष्ट्रीय आन्दोलन तथा ग्रंथ-लेखनको निबाहते हुए भी वे परीक्षामें कभी 'फेल' नहीं हुए। बैरिस्टरीकी सनद लेकर घर लौट आनेके दिन नजदीक आने लगे। उनके मनमें अपने घरके कुटुम्बियोंके चित्र आने लगे। 'अब घर पहुँचूंगा और चिर-विरहित भाइयोंसे मिलकर सुखी होऊंगा।' इसी तरहके विचार उनके मनमें चल रहे थे। इतनेमें उन्हें समाचार मिले कि 'अभिनव भारत' की पुस्तकें और गीत छापनेके अपराधमें उनके प्रिय ज्येष्ठ भ्राता श्रीयुत गणेशपतको आजन्म कालेपानीकी सजा दी गयी है। इस समाचारके बाद ही उन्हें समाचार मिले कि उनके छोटे भाई नारायणराव सावरकर (जिनकी अवस्था उस समय १९ वर्षकी थी) भी गिरफ्तार किये गये हैं और लार्ड मिण्टो पर फेंके गये बमके सम्बन्धमें उनकी गिरफ्तारी हुई है। घरपर उनकी भावज अकेली ही रह गयी थीं। उनका सावरकरजीको पत्र आया था। लिखा था, 'तात्याजी! मैं अब अकेली ही रह गयी हूं! आपके आनेकी बाट जोह रही हूं!' तात्या (सावरकरजीका उपनाम) ने जवाब लिखा—

* * *

'मेरी बाट क्यों जोहती हो? मुझे विश्वस्त रूपसे पता लगा है कि हिन्दुस्थानमें मुझपर भी वारंट है। पर, भावज! घबराओ मत। क्योंकि तुम हम बड़े कार्यके करनेका बीड़ा उठा चुके हैं। इस समय वह बड़प्पन प्रगट करनेका अवसर है। इस समय ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे समस्त संत 'वाह!' कह उठें। हमारे अनन्त पुरखे ऋषीश्वर, और आगे पैदा होनेवाली अनंत

पीढियाँ कह उठें कि खून किया ! वहिनी ! (आवज) इस समय इसी तरहका व्यवहार होना चाहिए।'

*   *   *

इधर बैरिस्टरीके 'इन'के सञ्चालकोंने सावरकरजीपर (विलायतमेंही) मामला चलाया। सञ्चालकोंमें लार्ड मोर्ले और अन्य कई एंग्लो इण्डियन्स थे। 'इन' के सदस्योंके सामने प्रश्न उपस्थित हुआ कि सावरकरजीको बैरिस्टरीके धन्धेके लिए सनद दी जाय या नहीं। सावरकरजीको राज-विद्रोही प्रमाणित करनेके लिए कई कागजात हिन्दुस्थान सरकारने विलायत सरकारके पास भेजे। सावरकरजीने उनपर लगाये गये समस्त आक्षेपोंके उत्तर दिये। अंतमें निश्चय हुआ कि सावरकरजीको सनद तो दे दी जाय पर उनसे लिखवा लिया जाय कि आगे राज-विद्रोह न करेंगे। सावरकरजीने कहा, 'यदि मैं राज-विद्रोह करूं, तो भारत सरकारकी अदालतें मेरी जांच कर सकती हैं और दण्डभी दे सकती है। तब इकरारनामा लिखनेकी क्या आवश्यकता है ? इसके अलावा ' राज-विद्रोह ' की व्याख्याभी अभी पूरी तौरसे नहीं बनी है क्योंकि भारत सरकार ' वन्दे मातरम् ' कहनेको भी राजविद्रोह समझती है '

*   *   *

अंतमें निर्णय हुआ कि सावरकरजी अभी जवानीके जोशमें हैं, सुधारके लिए उन्हें समय दिया जाय और सनद देनेके प्रश्नपर फिर विचार किया जाय। इसका स्पष्ट अर्थ यह था कि अगर

सावरकरजी राजनैतिक आन्दोलन छोड दें तो उन्हें सनद दी जाय। सनदकी प्राप्तिके लिए सावरकरजीने राजनीतिका त्याग नहीं किया। बैरिस्टरीपर इस तरह पानी छोडने वाले पहिले बैरिस्टर, इस देशमें, सावरकरजी ही हैं।

* * *

इस घटनाके पश्चात राजनैतिक परिस्थिति बिजलीकी गति से बदलने लगी। हिन्दुस्थानी क्रांतिकारियो और सरकारके बीचकी अग्नि प्रज्वलित हो उठी। उसकी ज्वालाए हिन्दुस्थानमें और लदनमें भी दिखाई देने लगीं। सन १९०९ के जून या जौलाई मासमें हिन्दुस्थान और इग्लैण्डको चकित कर देने वाली, कर्जन वायली की लालकाकारी हत्या, लदन शहरमें खुले मैदान हुई। मदनलाल धींगा इस खूनके करनेवाले प्रमाणित हुए। अनेक प्रकारके तर्क-वितर्क किये गये। अन्तमें मदनलालने अपने बयानमें कहा कि, "हिन्दुस्थानके नवयुवक देशभक्तोंको, अन्यायसे फासी और देश-निकाल की जो सजाए दी गयी हैं, उनका बदला चुकानेके लिए मैंने यह हत्या की है।"

* * *

धींगाके इस कार्यसे सारे इग्लैण्डमें हलचल मच गयी। इग्लैण्डमें उस समय जो हिन्दुस्थानी थे उन्होंने इस हत्याकी निंदा करनेके लिए सभा, लेख, भाषण आदिकी धूम मचा दी। धींगाकी जाच होनेके पहले ही, भावनगरी, सुरेंद्रनाथ बेनर्जी,

पाल पाधू, खापर्डे आदि नेताओंने धींगराका निषेध करनेके लिए एक सभा की। कई ऍंग्लो इन्डियन्स उक्त सभामें आये। कई अंग्रेज भी आये। धींगराके पिताने हिन्दुस्थानसे तार भेजा था कि "मुझे शर्म आती है कि ऐसे पुत्रने मुझसे जन्म पाया। मैं समझता हूं यह मेरा पुत्र नहीं है।" उक्त सभामें धींगराके दुष्कृत्यकी, हत्याकी, पागलपनकी, खूब बुराई की गयी। पश्चात् एक प्रस्ताव पेश किया गया कि 'ऐसे कायर खूनीके नीच कृत्यका हम तीव्र निषेध करते हैं।' इस प्रस्तावका संशोधन सभामें पेश होने वाला था, उसे दबाकर, सभापति महोदय तथा सभाके प्रमुख चालक, आगाखां और भावनगरी, चिल्ला उठे कि 'यह प्रस्ताव सर्व सम्मतिसे स्वीकृत हो चुका है।"

* * *

'मैंचेस्टर गार्डियन'के सम्वाददाताने लिखा है, 'इतनेमें सभा स्थलसे No! No! Not unanimously (नहीं सर्व सम्मति से नहीं) की ध्वनि उठी। वहाके हिन्दुस्थानी नेता और एंग्लो इण्डियन्स चिढकर चिल्लाने लगे, 'कौन नहीं कहता है? कौन इसके विरुद्ध है?' किसीने कहा, 'मैं'! लोग कहने लगे कौन है वह आदमी? पकडो उसे, नीचे बिठा दो। भावनगरी आपेसे बाहर होकर चिल्ला उठे, 'लात मारकर उसे निकाल दो, कहा है वह?' कहा है' के जवाबमें शान्ति और गम्भीरताके साथ जवाब आया, 'मैं यहा खडा हू, मेरा नाम सावरकर है। मैं इस प्रस्तावके विरुद्ध हूँ!' लोगोंने पीछे मुडकर देखा कि एक दुबला पतला नवयुवक खडा हुआ है! Youth and intelligence were stamped upon his face (जवानी और बुद्धिमत्ता उसके चेहरेपर चमक

रही थी) सभामें कोलाहल मच गया। लोग चिल्लाने लगे 'मारो उसे'। सावरकरका नाम सुनकर सभी डर गये थे। कहीं यह शख्स क्रान्तिकारियोंके साथ यहां बम फेंकने तो नहीं आया है! इतनेहीमें भावनगरीका इशारा पाकर एक बलवान युरेशियन अधगोरा-साहब दौड़ता हुआ आगे बढ़ा और उसने सावरकरजीकी आंखपर जोरसे आघात किया! चष्मा फूट गया! रक्तकी धारा बह निकली!! कपड़े और मुहँ सुर्ख होगया!!! फिरभी, किंचित चंचलता प्रकट न करते अथवा उक्त यूरेशियनका प्रतिकार न करते हुए, सावरकरजीने अधिक शांति और दृढ़ताके साथ कहा "अबभी मेरी राय इस प्रस्तावके विरुद्ध ही है!!!"

※ ※ ※

सावरकरजीको लहू लुहान देखकर एक हिन्दुस्थानी नवयुवकसे न रहा गया। उसने अपने हाथकी लाठीसे उस युरेशियनके सिरपर एक गहरी चोट जमाई। सिर फट गया। रक्त बहने लगा। उसका मुहँ और कपड़े रक्तसे रँग गये। अपनेको न सम्हाल सका, वह कुर्सीपर गिर पड़ा।

※ ※ ※

सभामें हाहाकार मच गया। लोगोंने सोचा, कोई उपद्रव खड़ा हो गया है। कोई बेंचके नीचे छिप गया, कोई कुर्सीके नीचे लुक गया। अंग्रेज सोचने लगे कि धींग्राकी तरह यहां भी हत्या की जायगी। सभागृहसे भाग निकलनेके लिए, दरवाजे पर इतनी

भीड और धक्कम-धक्का हुआ कि अंग्रेजी औरतें डरकर चिल्लाने लगीं। पुलिस आयी और भावनगरीके कहनेसे उसने सावरकरजीको पकडा। सुरेन्द्रनाथ बैनर्जीने कहा 'सावरकरको मारकर अत्याचार किया गया है।' इतना कहकर वे चल दिये। सभाभी भाग निकली। प्रस्तावको कचरकी टोकनी दखनी पडी। क्रांतिकारियों का हेतु सफल हुआ।

※　　　※　　　※

कुछ घण्टोंके बाद सावरकरजी छोड दिये गये। उनपर जुर्म लगाने लायक कोई सबूत ही नहीं था। उनसे पूछा गया कि यदि आप कहें तो उस यूरेशियन पर मामला चलाया जाय। सावरकरजीने इनकार कर दिया। पुलिससे छूटकर दूसरे ही दिन सावरकरजीने 'लंदन टाइम्स'मे अपने विरोधका स्पष्टीकरण छपाया। दूसरे दिनके लंदनके समाचार पत्रोंमें उसीकी चर्चा रही। उस स्पष्टीकरणमें सावरकरजीने लिखा था कि, "अभी अभियुक्तकी जाच अदालतमें नहीं हुई है। कई बडे बडे अधिकारी कहते हैं कि यह हत्या पागलपन या निजी द्वेषके कारण हुई है। ऐसी अवस्थामें उसके कार्यको राजनैतिक समझ लेना और उसे हत्याका दोषी मान-लेना, एक तरहसे अदालतका और समझदारीका अपमान करना है। यदि अदालत निर्णय करे कि खून राजनैतिक दृष्टिसे नहीं किया गया है, तब? इस लिए, निषेध प्रदर्शनकी जल्दी करनेकी आवश्यकता नहीं। आज तक कई गोरे सोल्जरोंने हिन्दुस्थानियोंकी हत्या की है। पर ऐसी अवस्थामे, अदालतके फैसलेसे पहले, किसी

अमेजनें निषेध-प्रदर्शक सभा की है ? सम्भव है, उन सोल्जरोंकी तरह, शराबके नशेमें यह इच्छा भी हुई हो ! अदालत से फैसला होनेसे पूर्व अंग्रेजोंने निषेध-सभा नहीं की। ऐसी अवस्थामें हिन्दुस्थानी लोग स्वयं ही न्याय देनेकी शीघ्रता न करें! इसी आशयकी उप-सूचना मैं पेश करने वाला था। उपसूचना के पश्चात् प्रस्ताव एक मतसे स्वीकृत किया जा सकता था। पर ऐसा न करते हुए, कल्पना-जन्य भयका चित्र देखकर, सभी लोग सभासे भाग निकले और मुझपर अन्यायपूर्ण प्रहार किया गया।" 'टाइम्स'में इस पत्रके छपते ही कई समाचार-पत्र चुप हो गये, कइयोंने सावरकरजीके पक्षका समर्थन भी किया। सुरेन्द्रनाथ बैनरजी जब विलायतसे लौटे तब बंबईमें 'राष्ट्रमत'के प्रतिनिधिने उनसे भेंट की। भेंट में सुरेन्द्रनाथ बाबूने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि सावरकरजीका कहना बिल्कुल न्यायपूर्ण और उनपर किया गया आघात अत्याचार था।

* * *

प., जिसके सिरमें चोट लगी थी, वह अध-गोरा साहब चुप न रहा। अपने आपको ब्रिटिश नस्लमें सम्मिलित करलेनेकी गरजसे उसने 'टाइम्स'को एक पत्र लिखा कि मैं ही वह आदमी हूँ, जिसने सावरकर को "A genuine British blow"—एक असली ब्रिटिश घूंसा दिया था! उस बदमाशी भरी घमंडका करारा प्रत्युत्तर दूसरे दिनके 'टाइम्स'में निकला, जिसके नीचे नाम दिया गया था 'ब्रिटिश ...

का सिर तोड़नेवाली, A straight Indian lathi—एक सीधी हिन्दुस्थानी लाठी !

* * *

लन्दनकी पुलिस अब हिन्दुस्थानी नवयुवकोंके पीछे छायाकी तरह रहने लगी। लन्दनके स्काटलैण्ड यार्ड—खुफिया पुलिस विभागके प्रमुख दफ्तरको—सावरकरजीके नेतृत्वमें, हिन्दुस्थानी युवकोंने खूब तंग किया ! यहां तक अवस्था पैदा हो गयी थी कि कभी कभी लन्दनके खुफिया विभागके गुप्तचर "स्वतंत्र हिन्दुस्थान" संस्थामें आते और हिन्दुस्थानियोंके डिटेक्टिव 'स्काटलैण्ड यार्ड'की खबर लाते। कुछ हिन्दुस्थानी युवक लन्दनके खुफिया विभागमें नौकर होगये थे। उधर पुलिसको वे उतनेही समाचार दिया करते थे जितने सावरकरजी देनेको कहते थे और कभी कभी तो पुलिसको धोखेमें डालने योग्य समाचार भी देते थे। इसी बातको करनेवाले एक महाशय आज भी मध्यप्रान्तमें हैं। इनके विषयमें लोगोंकी धारणा थी कि वे लन्दन-पुलिसमें नौकर थे। नागपुर कांग्रेसके समय जब उनसे साफ साफ पूछा गया तो उन्होंने कहा कि 'मैं लन्दन पुलिसमें नौकर था, पर जनताकी चुगली करनेके लिए नहीं वरन सरकारी समाचार प्राप्त करनेके लिए ! और स्वयं सावरकरजी की अनुज्ञासे ही मैं यह कार्य करता था।' उस समय जो लोग लंदनमें थे, उनमेंसे कुछ कहते हैं कि एक हिन्दुस्थानी सज्जन लंदनकी खुफिया पुलिसमें नौकर थे, पर जब वह पहचाने गये तब उन्हें पकड़नेके लिए वारंट निकला। उक्त महाशयको वारंटके समाचार मालूम होगये और वे

रातमें ही पैरिस चले गये। ये महाशय मद्रासी थे और कहा जाता है कि अब भी वहीं हैं।

* * *

उन नवयुवकोंको रहनेके लिए जगह नहीं थी, पढनेके लिए शाला नहीं थी, उनसे कोई बातचीत करनेका साहस नहीं करता था। वे रातदिन देशके लिए झगडते थे पर, लोगोंको उनके नाम भी मालूम नहीं थे क्योंकि उन्हें अपना कार्य गुप्त रीतिसे करना पडता था। ऐसी अवस्थामें भी उनका व्रत अखंड चलता रहा। प्रति रात, सोनेके पहले, वे अपने दिनभर किये कामोंपर विचार करते और अगले दिनके कामोंके विभाग करते। सब लोग एक जगह खडे रहते और एक स्वरसे अपनी राजनैतिक प्रतिज्ञाओंकी घोषणा करते। "भारतवर्ष अवश्य स्वतंत्र होगा! भारतवर्ष अवश्य एक राष्ट्र बनेगा। भारतवर्ष अवश्य लोक-सत्तात्मक बनेगा। भारतमें एक भाषा होगी, एक लिपि होगी। लिपि नागरी और भाषा हिन्दी होगी। लोक-सत्तामें चाहे राजा रहे चाहे राष्ट्रका चुनाहुआ अध्यक्ष। वह तभी तक सत्ताधारी रहेगा जबतक वह लोक-निर्वाचित रहेगा। निर्वाचित अध्यक्षवाली राज-संस्था ही राष्ट्र है।"

* * *

जब साधारण देश-कार्य करनेवालोंके पीछे पुलिस रातदिन लगी रहती है, तब यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि सावरकरजी को सतानेमें उसने कोई बात उठा नहीं रखी। उन्हें अपने आ-

सोंके आये हुए कुशल-पत्रादि भी नहीं मिल पाते थे। हर आठव दिन मेलसे आनेवाले हिंदुस्थानी यात्री उन्हें उनके घरपर हुए अन थौंकी कहानी कहते थे। उनके दूरके सम्बन्धी भी सताये जाने लगे! कई नौकरीसे बर्खास्त किये गये, कइयोंके धन्धे डूबे, किसी की जायदाद और धन जप्त किया गया! इन आफ्तोंमेंसे कुछ सावरकरजीको कोसने भी लगे—इस कुल-कलंकने हमारा सर्व नाश किया। व लंदनमें जिस किसीसे बातचीत करने जाते, वह उनसे मुख मोड़ लेता, कहीं रहनेके लिए मकान ढूँढ़ते, तो डिटेक्टिवके भयके कारण मकान मालिक या होटलवाले इन्हें स्थान देनेसे इन कार कर देते। एक दफा मकान ढूढ़नेकी पूरी कोशिश कर चुकने पर उन्हें एक होटेलमें स्थान मिल गया। नीचेके कमरेमें अपना सामान असबाब रखकर वे नीचे बैठे। उनके एक मित्र उनसे रोज मिला करते थे, उस दिन वह भी नहीं आये। मिण्टो-बम प्रकरणमें गिरफ्तार किये गये अपने छोटे भाईके समाचार पानेकी उत्सुकता उन्हें सता रही थी। उनकी सभी चिट्ठियाँ डाककी पटीसे ही अन्तर्धान हो जाती थीं। आखिर हिन्दुस्थानी अखबारोंसे अपने भाईके समाचार प्राप्त करनेके लिए उन्होंने पत्र खोले। इतनेहीमें होटलका मालिक आया और कहने लगा—Sir, I am sorry I cannot keep you here, you must quit this room The police are after me I shall lose my job! (महाशय! मुझे खेद है कि मैं आपको यहा नहीं रख सकता। आपको यह कमरा छोड देना चाहिए। पुलिस मेरे पीछे पडी हुई है, मेरा धन्धा डूब जायगा!) यह सुनकर सावरकरजीके लिए कोई चारा न

रहा। आधी रातके समय, आराम न करते हुए, उस विदेशमें, उन्हें बाहर निकलना पड़ा! इतने बड़े लंदन शहरमें उन्हें पाव रखनेके लिए कहीं मकान नहीं मिला। वे धन खर्चनेके लिए तैयार थे, पर मकान देनेके लिए कोई राजी नहीं हुआ! तब क्या किया जाय? लंदन छोड़ दिया जाय? और लन्दन छोड़कर कहाँ जायँ? हिन्दुस्थानमें? वहा जानेकी चिराकांक्षित आशा तो नष्ट हो चुकी थी। खावें क्या? बैरिस्टरी करके पेट पालें? पर बैरिस्टरीकी सनद तो राजनीतिके त्यागसे मिलने वाली थी। राजनीतिकी लगन, कमसे कम, इस जन्ममें तो छूटने जैसी न थी! इसी तरहकी चिंताओंसे उनके स्वास्थ्य पर भी बुरा परिणाम होने लगा।

षष्ठ अध्याय ।

पेरिस और इंग्लैण्डमें गिरफ्तारी ।

इन आफतोंके रहते हुए भी सावरकरजीने 'तलवार' नामका एक पत्र निकाला । उस पत्रके आरम्भिक अङ्कोंमें ही उन्होंने लिखा था कि "जहा साफ साफ बातोंका कहना असम्भव हो जाता है, वहा गुप्त-संस्थाओंका होना अपरिहार्य होता है और इसी लिए वे न्याय्य भी होती हैं । जहा राष्ट्रके विकास और स्वाभाविक उत्क्रान्तिके लिए अत्याचारके कारण गुजायश न रहे, वहा शक्तिका आघात न्यायानुकूल है । वैध मार्गोंसे शांतिके साथ जिस देशके लोग अपना मत राज्यमें प्रस्थापित कर सकते हैं, ऐसे देशोंमें, उदाहरणार्थ इंग्लैण्ड फ्रान्स आदिमें, यदि कोई क्रान्तिकारी गुप्त आंदोलन चलाये, तो वह आततायी कहलाया जायगा । हमारे देशमें जिस दिन वैध मार्गोंसे आन्दोलन किया जा सकेगा, उस दिन हम भी गुप्त और सशस्त्र प्रतिकारके मार्गको आनंदसे छोड देंगे । हम हिन्दुस्थानके लिए स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहते हैं । हमारी इच्छा है कि वह शांतिपूर्ण और केवल शांतिपूर्ण उपायोंसे ही प्राप्त हो । पर आपके बल प्रयोगके कारण यह बात असम्भव है । इस लिए हम भी बलका मुकाबला बल–प्रयोगसे ही करेंगे । " सावरकरजीने अपने इस पत्रका काम इंग्लैण्डमें कुछ समय पूर्व आये हुए श्री॰

वीरेन्द्र चट्टोपाध्यायके सिपुर्द किया था। सन १९१८ में नय सुधारोंके विषयोंमें सावरकरजीकी सम्मति पूछो गयी थी, उस समय भी उन्होंने इसी आशयका जवाब दिया था कि—It is a mockery to talk of Constitutional agitation where there is no constitution at all But it is a greater mockery-even a crime-to talk of revolution when there is a constitution, that allows the fullest development of a nation (जहाँ सगठित राज्यपद्धतिका अस्तित्व ही नहीं है, वहा वैध आन्दोलनकी बात करना उपहास मात्र है। परन्तु जब कोई ऐसी सगठित राज्यपद्धति मौजूद हो, जिससे राष्ट्रका पूरा विकास हो सकता हो, तब क्रान्ति तो एक गुनह है।)

*　*　*

सावरकरजीको अपेन्डिसाइटिसकी बीमारी हुई थी। उसके इलाज के लिए वे वेल्सके एक आरोग्य भवनमे ठहरे हुए थे। शामके समाचार पत्र आचुके थे, पर डाक्टरने पत्रादि पढनेसे रोक दिया था। उसी भवनमें किसी पत्रके एक सम्पादक महाशयभी बीमार पड हुए थे। वे सावरकरजीके पास आये और उन्हें एक तार बताया। तारमें लिखा था—“ गणेश दामोदर सावरकरकी आजन्म कालेपानीकी सजा अपीलमें भी कायम रही। अनत कान्हरे नामके युवकने नासिकके कलेक्टरको गोलीसे मारडाला।”

*　*　*

दूसरेही दिनसे इग्लैण्डके समाचारपत्र खुल्लम खुल्ला कहने लगे कि इन समस्त अत्याचारोंकी जडमे सावरकर हैं। सावरकरजीके

साथी उन्हें फ्रांस जानेकी सलाह देने लगे। हाथमें लिया हुआ काम छोडकर फ्रांस जानेसे सावरकरजीने इनकार कर दिया। इसपर हिन्दुस्थानी नवयुवकोंने कहा कि ' आपका स्वास्थ्य और आपकी स्वतन्त्रता हमारे लिए बहुत प्यारी है, इस लिए आपके पास जो आदमी आया है, उसके साथ आप फ्रांस चले जाँय।' पैरिससे भी इसी आशयके पत्र और चिट्ठियां आयीं। आखिर सावरकरजी पैरिस जानेके लिए राजी हो गये।

※ ※ ※

पैरिसके हिन्दुस्थानी नवयुवकोंने अपने सभापतिका बड़े प्रेमसे स्वागत किया। लंदनके स्थानपर पैरिसही इनकी हलचलोंका केंद्र बन चला। मैडम कामाके घर व पैरिसमें रहने लगे। श्रीमती कामाने अपने पुत्रकी तरह सावरकरजीकी शुश्रूषा की जिससे वे शीघ्र ही रोग-मुक्त हुए। श्रीमती कामा पैरिससे 'वन्देमातरम' नामका एक पत्र निकालती थीं। इसके अलावा, अमरीका, जर्मनी आदि देशोंमें इसाई मिशनरियोंने हिन्दुस्थानियोंके विषयमें जो झूठी बातें प्रचलित कर रखी हैं, उनका भी व निराकरण करती थीं। दादा भाई नौरोजी जिस समय लंदन पार्लियामेण्टके लिए उम्मेदवार खड़े हुए थे, उस समय मैडमकामाने उनकी अधीनतामें काम किया था। आगे वे होमरूल सोसाइटीमें सम्मिलित हुईं और निःशस्त्र प्रतिकारके मार्गका अवलम्बन करने लगीं। कुछ दिनों बाद उन्हें इसका वैय्यर्थ प्रतीत हुआ और वे अभिनव भारतकी सदस्या बनीं।

※ ※ ※

—

एक बार मैडम कामा जर्मनी गयी थीं। वहां जर्मन लोगोंके अखिल सोशियलिस्ट यूनियनकी सभा थी। उस सभाके लिए, एक हिन्दुस्थानी महिलाके नाते, श्रीमती कामाको भी निमंत्रण दिया गया था। अभिनव भारतके लिए एक तीन-रंगका झण्डा श्रीमतीजीने तैयार किया था। उसे लेकर व सभामें गयीं। जब भाषण करनेके लिए उनसे अनुरोध किया गया, तब हिन्दुस्थानकी राज्य-क्रान्तिके सम्बन्धमें व बोलने लगीं। श्रीमती कामाकी रेशमी साड़ी, वेशभूषा, तेजस्विता आदि देखकर सारी सभा चकित हो गई। प्रत्येक आदमी कहने लगा, She is an Indian princess (वह हिन्दुस्थानकी रानी है) इतने ही में मैडम कामा अपने बनाये तिरंगे झण्डेको फहराते हुए बोलीं—"This is the flag of Indian Independence Behold it is flown It is already sanctified by the blood of the martyred Indian youths! I call upon you, gentlemen, to rise and salute this flag of new India of Indian Independence" (भारतकी स्वतंत्रताका यह झण्डा देखिए। देखिए यह फहरा रहा है। भारतीय नवयुवक शहीदोंके खूनसे यह पवित्र हो चुका है। सभ्यो! मैं आपसे अनुरोध करती हूं कि नवीन भारतके इस स्वतंत्रताके ध्वजको उठकर आप अभिवादन करें!) श्रीमती कामाकी बातें उस सभामें काम कर गयीं। उनके उस उत्साह पूर्ण आवेश-युक्त भाषणको सुनकर, सारी सभा मंत्र-मुग्धकी तरह खड़ी हो गयी और सबोंने इस भारतके स्वतंत्रता-ध्वजको—जो संसारमें पहलीही बार फहराया गया था, टोपी उतारकर सलामी दी!

※ ※ ※

फान्हेरेके मुकदमेके समाचार पैरिसमें आने लगे। हिन्दुस्थानकी अदालतमें गोरे, देशपांडे, खरे आदि अभियुक्तोंने कहा था कि हमसे जबरन इकबाल कराया गया है। पुलिसका कहना था कि यह बात गलत है, किसी तरहकी ज्यादती नहीं की गयी। इन समाचारोंमें सच और झूठका निर्णय करना कठिन हो गया। इधर लन्दनमें जो हिन्दुस्थानी नवयुवक रहते थे, उनपर भी वारंट निकलनेके समाचार आने लगे। वे लोग लन्दनसे पैरिस आनेके लिए उत्सुकता बतलाने लगे। पर, यदि सभी लोग लन्दन छोड़दें, तो वहां काम कौन करेगा? यदि सावरकरजी उनसे लन्दन न छोड़नेके लिए कहें, तो शायद उनकी बातोंका विपरीत अर्थ निकाला जाय। अंग्रेजी समाचारपत्र पहलेहीसे कहते थे कि सावरकर स्वयं तो रक्षित स्थानपर बैठे हुए हैं और अन्य भावुक नवयुवकोंको आगमें ढकेल रहे हैं। वैसे सावरकरजीके अन्य सभी साथी, धीमा सहित, अवस्थामें उनसे बड़े थे। पर सावरकरजीका मन कहने लगा कि पैरिस छोड़कर इंग्लैण्ड जानाही चाहिए। यदि वहां जाकर गिरफ्तार किये जायँ तो कमसे कम यह सन्तोष तो होगा कि मृत्युके आनेतक अपना कार्य करते रहे। इस कार्यसे स्वार्थ त्यागका प्रत्यक्ष पाठ देशके सामने उपस्थित होगा जिससे अन्य नवयुवकोंमें आजन्म लड़ते रहनेवाली स्फूर्ति उत्पन्न होगी। यदि गिरफ्तारी न हुई तो पैरिसकी अपेक्षा लन्दनमें राष्ट्रीय कार्य अधिक जोरोंसे किया जा सकेगा। इसके सिवाय स्वयं लन्दनमें रहकर दूसरे युवकोंसेभी कह सकेंगे कि लन्दन छोड़कर मत भागो। दुश्मनोंके कुतर्कोंकाभी खण्डन होगा। सावरकरजी बार बार इसी तरह सोचतेथे पर पैरिसके उनके मित्र उन्हें बार बार रोकते थे। ऐसीही दुविधामें कुछ दिन व्यतीत हुए।

* * *

पैरिस छोडकर लदन आनेके लिए और भी कई कारण हुए। पर उनके रहस्य-मय समाचारोंपर आजभी पर्दा पडा हुआ है। हा, उनके एक मित्रके कथनानुसार, इतना कहा जा सकता है कि आगे दी हुई घटना भी उनके लंदन जानेका एक कारण थी। वह घटना इस प्रकार थी—पैरिसमे एक सुन्दर क्रीडा-नदी बनाई गयी है। एक दिन सावरकरजी और उनके सहकारी मित्र ला० हरदयालजी, उस नदीपर घूमने गए। ला० हरदयाल सिविल सर-विसकी परीक्षाके लिए हिन्दुस्थान सरकारसे स्कालरशिप प्राप्तकर लदन आये थे। उनके विचारोंका वहा विकास होता रहा। आगे चलकर 'अभिनव भारत' के व एक प्रमुख कार्यकर्ता बने। जब ये दोनों उक्त नदीपर गये तब उन्होंने देखा कि नदीपर अनेक पद्-धानक श्वेत पक्षी क्रीडा कर रहे है। तरह तरहके पुष्प फूल रहे हैं। मनुष्य-कृत जल-प्रपात नदीमे गिर रहे हैं। डाक्टरने इन दोनोंको वायु-सेवन की सलाह दी थी। घूमते घूमते सावरकरजीको अपनी जेबमे रखे हुए मराठी समाचार पत्रका स्मरण हो आया। उन्होंने पढनेके लिए वह पत्र निकाला। पढनेपर उन्हें मालूम हुआ कि अपने प्यारे मित्रोंपर प्राण तुल्य छोटे भाईपर, सरकारी स्नेहियोपर, प्रिय शिष्योंपर, पुज्य देश भक्तोंपर, हिन्दुस्थानमें अनेक यातनाए गजब ढा रही हैं। वे उधर जेलमे सड रहे हैं, और मैं ? मैं इस नदीपर पक्षियों और फूलों की सुन्दरतामें विहार कर रहा हू ! उन्होने सोचा, मेरे उपदेशसे प्रेरित होकर, मेरे शब्दोंके लिए अपने प्राण निमर्जन करने वाले इन आप्त जनोंपर उधर कहर गुजर रहा है, वे कारावास की अध-

कार मय कोठडियोंमें सड रहे हैं, और इधर मैं पैरिसमें सुगन्धित वायु सेवन के लिए नदी तटपर आरामसे घूम रहा हूं! यदि वे मुझे नीच समझें, तो उनका इसमें क्या दोष है?

* * *

इसी तरहके विचारोंने उनके मनको व्यग्र कर डाला। अंतमें इस सत् कुलोत्पन्न, उच्चध्येयदर्शी मातृभूमिके लिए सहज ही प्राण निछावर कर देनेवाले, भावुक नवयुवकने निश्चय किया कि 'मुझे वापिस लंदन जाना ही चाहिए! मेरे भाई, स्नेही, सहकारी आदि अनेक देश-वीरोंके साथ मुझे भी पहिले हल्लेमें ही देशके काम आना चाहिए। मुझे पैरिसमें नहीं रहना चाहिए। सभी यदि पीछे रहें तो मृत्युके मुखका कौर कौन बनेगा? प्रत्येक आदमी विजयकी अभिलाषासे पीछे रहने लगा तो दुश्मनोंके सामने रहकर विपत्तियोंकी पहली फैर अपनी छातीपर कौन झेलेगा? नहीं, मुझे लंदन जाना ही चाहिए।'

* * *

पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा, सावरकरजीको बड़े स्नेहकी दृष्टिसे देखा करते थे। वे प्रायः उनको समझाया करते थे कि "Thou art a general! Thou must not go to the trenches!" (तू सेनापति है, तुझे युद्धकी खाइयोंमें जानेकी आवश्यकता नहीं!) उनके इस तरहकी बातचीतसे सावरकरजी लज्जित हो जाते। वे मनमें सोचते, सम्मुख जाकर लड़ाईके संकटों-

को उठानेवाला सिपाही कहलाता है और अपनी चमड़ी बचाकर पीछे रहनेवाला, सेनापति ! यह तो ठीक नहीं। आगे बढ़ूंगा, मार-काटसे बचकर जिन्दा रहा तो सेनापति बन जाऊंगा ! आखिर किसी की बात न मानकर उन्होंने लंदन जाना निश्चित कर ही लिया। उनके जानेके अन्य भी कारण थे जो अप्रकट हैं। पर उनके मित्रों द्वारा जो कुछ बातें मालूम हुई हैं वे ही हमने यहाँ दी हैं।

※

सन १९१० का समय था। सावरकरजी लंदन जानेवाले जहाजपर सवार हुए। पैरिसके समस्त हिन्दुस्थानी विद्यार्थी, व्यापारी आदि उन्हें पहुँचानेके लिए आये थे। सभी सावरकरजी पर विश्वास रखते और उन्हें दिलसे चाहते थे। वे लोगोंसे बिदा लेने लगे। कहा, ' Upto this time you have seen how I tried my best to work much Now let me see if I can suffer much ! (आजतक आप देख चुके हैं कि मैंने कार्य करनेके लिए अपनी पूरी कोशिश की है। अब मुझे देखने दीजिए कि मैं अधिकसे अधिक कष्ट भी सह सकता हूँ या नहीं !) जहाज पैरिससे इंग्लण्ड पहुंचा। सावरकरजी बंदरपर उतरकर रेलपर सवार हुए। उस डिब्बेमें, जिसमें सावरकरजी बैठे थे, सशस्त्र गुप्त पुलिसका पहरा था। लंदन स्टेशनमें रेल घुसी। सावरकरजीका डिब्बा स्टेशनपर आते ही फौजी आज्ञा हुई कि 'बस यहीं गाड़ी रुक जाय।' गाड़ी रुकी, चारों तरफसे सावरकरजीका डिब्बा सशस्त्र आदमियोंसे घिर गया !

※ ※ ※

दूसर दिन ससारके समस्त समाचार पत्रोंमें सावरकरजीकी गिरफ्तारीक समाचार प्रगट हुए। सावरकरजीक मित्रोंपर तो मानों आकाशसे वज्रही टूट पडा! अदालतमे पुलिसका सख्त पहरा था, तिसपर भी लोगोंकी एक बडी भीड एकत्र हो गयी। सावरकरजी डॉकपर लाये गये। सैकडों आदमियोंकी करतल-ध्वनिने उनका स्वागत किया। अग्रेजी पत्रोंके प्रतिनिधि फोटो लेने लगे। सावरकरजीसे कहा गया कि फासी या आजन्म मृत्युके दण्डसे दण्डित होनेवाले, इण्डियन पीनल कोडक १२१ वीं धाराक अपराधमें आप गिरफ्तार किये गये हैं!

* * *

वे इग्लैण्डकी ब्रिस्टन जेलमें रखे गये। इसीं जेलमें एक बार वे धींगरासे मिलनेके लिए आये थे। उनके कई मित्रोंने उन्हें वहासे निकाल लेजानेके लिए षडयन्त्र रचे। कई लोग उनसे मिलनेके लिए रोज वहा आते थे। अदालत में सफाई देनेके लिए विचार किये गये। उनके बचानेके लिए फण्ड खोला गया, जिसमें हिन्दुस्थानियोंके साथ आयरिश लोगोंने भी चन्दे दिये। अन्तमे जजने उन्हें हिन्दुस्थान भेजनेकी आज्ञा दी। उसके उत्तरमे सावरकरजीने एक मनोरजक एव मर्म-भेदक भाषण दिया। इन सब घटनाओंका यहा केवल उल्लेख ही किया जा सकता है।

* * *

आखिर अपील कोर्टसे भी यही आज्ञा हुई सावरकरजी हिंदुस्थानमें भेजे जाय। हिंदुस्थानकी अदालतके सामने आनेका अर्थ था या तो अदमान, या फांसी। इसी लिए सावरकरजीने अपने सालिसिटरोंकी मार्फत अपनी भावजके पास अपना 'मृत्युपत्र' लिख भेजा। वे समझ चुके थे कि अब अपने किसी आप्त-सम्बन्धीको वे पत्र न भेज सकेंगे और इसी लिए अपना अंतिम संदेश समझकर उन्होंने अपना 'मृत्युपत्र' लिखा था। वह पत्र मराठीमें है, फिर भी हम उसे यहां उद्धृत करते हैं। हमें विश्वास है कि मराठी भाषासे किंचित् भी परिचय रखने वाला प्रत्येक हिन्दी भाषा-भाषी व्यक्ति इन कविताओंको अच्छी तरह समझ सकेगा,—

* * *

माझें मृत्युपत्र—

वैशाखिचा कुमुदनाथ नभात हासे।
यच्चंद्रिका धवल सौधतळीं विलासे॥
घाली स्वयें जल जिला प्रिय बाल खासे।
जाई फुलें चिमुकली नटली सुवासें॥१॥
आले घरीं सकल आप्त सहृद् जिवाचे।
आनंदमग्न कुल गोकुल काय साचें॥
आदर्श दीप्ति–शुचिता–धृति–यौवनाचें।
पाहुनि जें तरुण–मंडल कीर्ति नाचे॥२॥
प्रेमें हृदें विकसलीं नव यौवनाच्या।
गंधें सुवासित उदात्त सुसंस्कृतीच्या॥

दिव्यालता तरुसि जें गृह बाग झाला ।
ज्या पौर हर्षित वदे जन 'धर्म-शाला' ॥३॥
स्वैंपाक त्वा निजकरें कुशले करावा ।
प्रेमें तुझ्या अधिकची सुरमाल व्हावा ॥
सवाद सर्व मिळुनी करिता निवांत ।
जेवावयासि बसलों जई चादण्यात ॥४॥
श्री रामचद्र वनवास कथारसाला ।
कीं कैंवि देश इटली रिपुमुक्त झाला ॥
तानाजिचा समरधीर तसा पवाडा ।
गावा चितोरगड वा शनवार वाडा ॥५॥
झाली कशी प्रियकरा अपुली अनाथा ।
दुर्दास्यछिन्न शरछिन्न विपन्न माता ॥
शोकें निवचुनि तिच्या जई मोचनाचे ।
घेलें अनत तरुणा उपदेश साचे ॥६॥
तो काल रम्य, मधुरा प्रिय सगती ती ।
तें चादणें, नवकथा-रमणीय रात्री ॥
तें ध्येय दिव्य निजमातृ-विमोचनाचे ।
तो उग्र निश्चयहि, त उपदेश साचे ॥७॥
झाल्या तदा प्रियकरासह आण भाका ।
त्या सर्व देवि वहिनी स्मरती तुम्हा का ?॥
'बाजी प्रभू ठरु' वदे युव सघ सर्व ।
'आम्हीं चितोर युवती' युवती सगर्व ॥८॥
कीं घेतलें व्रत न हें अम्हि अधतेनें ।
लब्धप्रकाश इतिहास—निसर्ग—मार्ने ॥

जें दिव्य दाहक म्हणूनि असावयाचें ।
बुध्याचि वाण धरिलें करिं हें सतीचें ॥९॥

* * *

२

ज्या होति तैं प्रिय जनासह आणभाका ।
त्यातें स्मरोनि मग साप्रत हें विलोका ॥
नाहीं पुरी उलटलीं जरि आठ वर्षें ।
तों कार्यसिद्धि इतुकी मन का न हर्षे ? ॥१०॥
आसेतुपर्वत उचबळला स्वदेश ।
वीराकृती धरित टाकुनि दीनवेष ॥
भक्ताचिया रघुवरीं धुरजाति धुंडी ।
जाज्वल्य होयहि हुताशन यज्ञकुंडीं ॥११॥
तो यज्ञ सिद्ध करण्यास्तव ज्या दीक्षा ।
जे घेति येइ तईं तत्कृतिची परीक्षा ॥
"विश्वाचिया अग्निळ मंगळधारणाला ।
बोला असे कवण भक्त हुताशनाला" ॥१२॥
आमंत्रण प्रभु रघुत्तम योजिता हें ।
दिव्यार्थ, देव ! अामुचें कुळ सज्ज आहे ॥
हे साध्वि ! गर्जुनि असे पहिल्या हवीचा ।
हा ईश्वरी मिळविला अग्रिंह मान साचा ॥१३॥
धर्मार्थ देह वहलो ठरले नितांत ।
ते बोल-फोल नचि बालिश वायफात ॥

ना भंगली मिळुनिया धृति यानताना ।
निष्काम-कर्मकर योगहि खंडिला ना ॥१४॥
ज्या होति तें प्रियजनासह आणमाका ।
फेटयाचि सत्य कृतिने अजि ह्या विलोका ॥
दीप्तानलात निजमातृ-विमोचनार्थ ।
हा स्वार्थ जाळुनि अम्हीं ठरलो कृतार्थ ॥१५॥
हे मातृभूमि तुजला मन वाहियेलें ।
वक्तृत्व-वाग्विभवही तुज अर्पियेलें ॥
तूतेंचि अर्पिलि नवी कविता वधूला ।
लेखाप्रती विषय तूचि अनन्य झाला ॥१६॥
त्वत्स्थडिलीं ढकलिलें प्रिय मित्रसघा ॥
येलें स्वयें दहन यौवन-देह-भोगा
त्वत्कार्य नैतिक सुसमत सर्व देवा ॥
तत्सेवनीच गमली रघुवीर -सेवा ॥१७॥
त्वत्स्थडिलीं ढकलिली गृह वित्त मत्ता ।
दावानलात वहिनी नव पुत्रकांता ॥
त्वत्स्थंडिली अतुल-धैर्य वरिष्ठ बंधु ।
केला हवी परम कारुण पुण्यसिंधु ॥१८॥
त्वत्स्थंडिलावरि बळी प्रिय बाल झाला ॥
त्वत्स्थडिली बघ अता मम देह ठेला ॥
हें काय बघु असतों जरि सात आम्हीं ॥
त्वत्स्थडिलींच असते दिधले बळीं मी ॥१९॥
सतान या भरतभूमिस तीस कोटी ।
जे मातृभक्ति-रत-सज्जन धन्य होती ॥

हें अपुलें कुलहि त्यामधि ईश्वराश ।
निर्वंश होउनि— उरल असह वंश ॥२०॥
की तें उरोहि अथवा न उरो परंतु ।
हे मातृभू अम्हि असो परिपूर्ण हेतू ॥
दीप्तानलांत निजमातृविमोचनार्थ ।
हा स्वार्थ जाळुनि अम्ही ठरलों कृतार्थ ॥२१॥
ऐसें निचुनि अहो वहिनी ! व्रतातें ।
पाळोनि वर्धन करा कुल दिव्यतेतें ॥
श्रीपर्वती तप करी हिमपर्वती ती ।
की दिव्यदाह हसल्या बहु राजपूती ॥२२॥
तें भारतीय—ललना—बल तेज कांहीं ।
अद्यापि या भरतभूमित लुप्त नाहीं ॥
हें सिद्ध होइल असेंच उदार वृत्त ।
वीरांगने ! तव सुवर्तन हो समस्त ॥२३॥
माझा निरोप तुज येथुनी हाच देवी ।
हा वत्स वत्सल तुझ्या पदिं शीर्ष ठेवी ॥
सप्रेम अर्पण असो प्रणती तुम्हांतें ।
आलिंगन प्रियकरा मम अंगनेतें ॥२४॥
की घेतलें न व्रत हें अम्हीं अंधतेनें ॥
लब्धप्रकाश—इतिहास—निसर्गमानें ॥
जें दिव्य दाहक म्हणोनि असावयाचें ॥
बुध्याचि वाण धरिलें करिं हें सतीचें ॥२५॥

* * *

भावानुवाद—वैशाख मासका चन्द्र नभमें हास्य कर रहा था। उसकी धवल चन्द्रिका मकानोंपर प्रकाश डाल रही थी। जिस जाईकी लताको बालने जल-सिंचन किया था वह अपने छोटे फूलोंकी महकसे फूल रही थी। ऐसे समय सभी आप्तजन घर आये थे। उस समय हमारा घर गोकुलकी तरह आनद-मग्न हो रहा था। उन नवयुवकोंकी आदर्श दीप्ति, शुचिता, धृति देखकर स्वयं कीर्तिभी नाचती थी। नवयौवनके प्रेमसे हम लोगोंके हृदय-पुष्प खिल रहे थे और उदात्त सभ्यताकी गधसे सुगंधित हो रहे थे। दिव्य लता और वृक्षोंसे हमारा घर उद्यानकी तरह शोभा पाता था और जिसे गाहक लोग ' धर्म शाला ' कहते थे। ऐसे समय प्यारी भावज ! तू बड़ी कुशलताके साथ भोजन बनाती थी, जो तेरे प्रेमके कारण अधिक ही रसाल बनता था। हम लोग बातचीत करते हुए चाँदनीमें भोजन करने बैठते थे। उस समय कभी कभी श्रीरामचन्द्रके वन वासकी कथा निकल पडती, इटली देशके स्वतंत्र होनेका इतिहास कोई कहने लगता, वीरवर तानाजीके वीरगीत हम लोग गाने लगते और कभी कभी चित्तौरगढ़ और पूनेके शनिवार वाड़ेकी बातें करने लगते। ऐसे समय अपनी इस भूमाताका—इस दास्यताके बधनसे जकडी हुई, दुष्मनोंके शस्त्रोंसे छिन्न-भिन्न, प्रिय बनाया माताका स्मरण हो जाता और उसके दु:खसे हृदय द्रवित होकर कई नवयुवकोंको उसके विमोचनके लिए मैं उपदेश दिया करता था। प्यारी भावज ! वह रम्य समय, वह प्रिय-जनोंका मधुर सहवास, वह चन्द्रप्रकाश, वे नव कथाएं, वे रमणीय रातें, देशभूमिको बन्ध-मुक्त करनेका वह दिव्य उद्देश्य, उसकी पूर्तिके लिए किये गये

उग्र निश्चय, आदि बातों का तुझे स्मरण है ? तुझे स्मरण है, देवि वहिनी ! तुझे स्मरण है, उस समय युवक संघने कहा था “ हम बाजीप्रभु बनेंगे” और युवतियोंनेभी गर्वके साथ कहा था, “ हमभी चितौरकी वीरागनाए बनेंगी । ” वहिनी ! हमने यह व्रत अधेपनसे स्वीकार नहीं किया है । आज तकका इतिहास जिसको प्रकट रूपसे दिव्य-दाहक कहता है उसी सतीके व्रतको, प्यारी भावज ! हमने सोच समझकरही धारण किया है ।

*　　　*　　　*

देवि वहिनी ! उस समय प्रियजनोंके साथ जो प्रतिज्ञाए हुई थीं, उन्हें स्मरण करो और आजकी अवस्थाको देखो । तुम देखोगी कि पूरे आठ साल भी नहीं होने पाये कि हमारा उद्देश्य इतना अधिक सफल हो गया है । ऐसे समय बताओ मनको हर्ष क्यों न हो ? देखो, कन्या कुमारीसे लेकर हिमालय तक इस देश में हलचल मच गयी है और वह दीनताका त्याग कर वीरताको धारण कर रहा है ! रघुवीरके चरणोंमे भक्तोंकी भीड लगी हुई है और उधर यज्ञकुण्डमें हुताशन भी प्रदीप्त हो रहा है ! उस यज्ञके करनेके लिए जो लोग दीक्षा ले चुके हैं, उनकी परीक्षाका अवसर आता है और रघूत्तम प्रभु पूछते हैं—“समस्त ससारके मगलके लिए, कहो इस अग्निमें कौन अपनी आहुति डालनेके लिए तैयार है ?” साध्वी भाभी ! इस दिव्यार्थ निमत्रणको पाकर, हमने गर्ज कर कहा, ‘हमारा कुल प्रस्तुत है’ । यह कहकर हमने ईश्वरी सम्मान प्राप्त किया है ! हम लोग पहले कह चुके थे कि हमारे देह

लिए न्यौछावर किये जायँगे। भाभी ! वह कहना अर्थहीन नहीं था। अनंत यातनाओंको सहकर भी हमारा धैर्य नहीं टूटा और निष्काम कर्म-योग भी हमारा खंडित नहीं हुआ ! उस समय प्रिय-जनोंके साथ जो प्रतिज्ञाएं की थीं, तुम देखोगी अपनी कृतिसे आज वे सत्य हो गयी हैं। अपनी माको बंध-विमुक्त करनेके लिए, प्रज्व लित अग्निकुंडमें अपना स्वार्थ जलाकर हम आज कृतार्थ हो गये हैं।

* * *

मेरी मातृभूमि ! तेरे चरणोंपर मैं अपना मन अर्पण कर चुका हूँ। मेरा वक्तृत्व, वाग्वैभव, मेरी नयी कविता वधु, सभीको तेरे चरणोंपर अर्पण कर चुका हूँ। मेरे लेखोंके लिए भी तेरे बिना अन्य विषय नहीं है। तेरे स्थंडिलपर प्यारे मित्र सबको डाल चुका हूँ, अपने यौवन, देह, भोग आदि सभी दे चुका हूँ। तेरा कार्य नीति भरा, सब देवताओं द्वारा सु-सम्मत है, इसी लिए तेरी सेवामें ही मुझे रघुवीरकी सेवा दिखाई दी। तेरे स्थंडिलपर गृह, धन, आदि सभी चढा चुका हूँ। प्रज्वलित अग्निमें अपनी भावज पुत्र साथ और अतुलधैर्य ज्येष्ठ भ्राताको भी अर्पण कर चुका हूँ और अब मैं स्वयं अपना देह भी चढानेके लिए प्रस्तुत हूँ। यही क्या ! यदि हम सात भाई भी होते तो भी तेरी बलि वेदिपर मैं उन्हें चढा देता ! इस भारत-भूमिके तीस करोड सन्तान हैं, जो मातृभक्तिमें लगे हुए सज्जन हैं, वे धन्य हैं। यह हमारा कुल भी उन्हींमें एक ईश्वरांशकी तरह है—निर्वंश होकर भी हमारा वंश अखंड होगा !

* *

वश चाहे अच्छा हो चाहे न हो, पर मातृ-भूमि ! हमारे हेतु परिपूर्ण होवें। प्रज्वलित अग्निमें, मातृ-बन्धन-विमोचनके लिए ही अपना स्वार्थ जलाकर हम कृतार्थ हो गये हैं। प्यारी भावज ! इस तरह सोचकर अपने व्रतका पालन कीजिए और अपने कुलकी दिव्यता-वर्धन कीजिए। श्रीपार्वतीने हिमालय जैसे पर्वतपर तप किया है और कई राजपूतनियें हसते हसते जल चुकी हैं। प्यारी भावज ! भारतीय ललनाओंका वह बल और तेज आज नष्ट नहीं हुआ है ! इस बातको प्रमाणित करनेके लिए, भावज ! तुम्हारा समस्त व्यवहार वीरांगनाकी तरह ही होना चाहिए। देखो यहांसे मेरा तुझे यही सन्देश है। मैं तेरा बालक हूं, तेरे वत्सल चरणोंको यहींसे प्रणाम करता हूं। मेरा प्रेम-पूर्वक प्रणाम स्वीकार करो। मेरी प्यारी पत्नीको आलिंगन कह देना। आज तकका इतिहास जिसको प्रकट रूपसे 'दिव्य-दाहक' कहता है, उसी सतीके व्रतको, प्यारी भावज ! हमने सोच समझकर धारण किया है।

* * *

सावरकरजीको हिन्दुस्थानमें लेजानेका हुक्म तो हो चुकाथा पर अभी उसपर अमल नहीं हुआथा। साधारण तया, इङ्गलिश खाड़ीसे फ्रान्सके किनारे पर जहाजसे उतरकर तथा फ्रान्समेंसे रेल्वे द्वारा इटली तक आकर वहांसे जहाजसे, लोग हिन्दुस्थान आया करते हैं, पर पुलिसको सन्देह हो चुका था। इसीलिए उन्होंने फ्रान्सका रास्ता छोड़कर जानेका निश्चय किया। इधर फ्रांसके हिन्दुस्थानी लोग इस बातके लिये तैयार बैठे हुए थे कि सावर-

करजीपे फ्रान्सकी हदमें घुसन दी, उन्हें बलात्कारसे गिरफ्तार करनेका दावा इंग्लिश पुलिसपर चलाया जाय। इसलिए इंग्लैण्डसे निकलकर किसी अन्य राष्ट्रके बन्दरपर न ठहरतही, बिस्ककी खाडीमेंसे सावरकरजीको हिन्दुस्थान ले जानेके लिए जहाज रवाना किया गया। साथ में पहर पर हिन्दुस्थानी एव अंग्रेज पुलिस अफसर रखे गये और बड़ इन्तजाम के साथ उनकी रवानगी की गयी।

* * *

उस समय सावरकरजीके मनमें दो विचार आ रहे थे। पुलिस शायद समझती थी कि उसने बडी चतुराईसे उन्हें गिरफ्तार किया है। यदि हो सका तो सरकारके इस घमडको नष्ट करके, स्वतन्त्र होकर फिरसे कार्यारम्भ किया जाय। यदि यह न हो सके तो कमसे कम कोई ऐसा साहसपूर्ण कार्य करना चाहिए जिससे यूरोपके समस्त दशोंका ध्यान हिन्दुस्थानकी राजनीतिकी ओर आकर्षित हो जाय। प्राय अंग्रेजी मिशनरियोंने यूरोपमें हिन्दुस्थानके विषयमें ऐसी ऐसी विचित्र बातें फैला रखी हैं कि हिन्दुस्थान, औरतोंको जलाकर सती करनेवाला और बच्चोंके जन्मतही गगामे प्रवाहित कर, इसीको पवित्रता और धर्म समझनेवाला, भोला एव रवेन्टाम अंग्रेजोंकी गुलामीमें रहनेवाला देश है। हिन्दुस्थानकी बात निकलने र बहुतसी स्त्रियाभी प्राय कह दिया करती थीं कि— 'बात ठीक है! हिन्दुस्थानी लोग पहले जमानेमें बहुत बडे पडित रहे होंगे। पर इस समय तो यह हाल है कि एक गडरियेका छोकडा जितनी भेडें नी अकेली लकडीसे हाँकता है उनसे कई गुना, तुम्हारे जिन्‍

आदमी एक अंग्रेज लड़का हिन्दुस्थानमें सम्हालता है। ऐसी हाल-तमें तो यही कहना पड़ता है कि तुम लोग गुलामीके ही योग्य हो। जिस समय तुम लोगोंमें साहसका संचार होगा, जिस समय तुम्हारे देशके एक एक स्वातंत्र्य-प्रेमी नवयुवकको सम्हालनेके लिए देश दश अंग्रेजोंकी आवश्यकता पड़ेगी, उस समय हमलोग कहेंगे कि अंग्रेज तुमपर बलात्कारसे राज्य करते हैं।" उस समय यूरोपके प्रायः सभी देशोंमें हिन्दुस्थानके सम्बन्धमें यही विचार प्रचलित थे। सावरकरजीने सोचा कि यूरोप-वासियोंके इन विचारोंको मिटाने के लिए भारतवर्षके ध्येयों तथा उनकी सफलताके लिए किये गये अटल निश्चयोंकी सूचना समस्त संसारको करा देना आवश्यक है।

* * *

आज यूरोपमें यह ख्याल किसी अंशमें कम होगया है। आज हिन्दुस्थानकी स्वतंत्रता प्राप्तिकी इच्छाओंको, अंतर्राष्ट्रीय जगतमें कुछ महत्व प्राप्त हो गया है। अब इस बातको प्रमाणित करनेकी आव-श्यकता नहीं है कि हिन्दुस्थानमें भी अपने देशके लिए अपनी बलि चढ़ानेवाले तपस्वी और वीर मौजूद हैं। यूरोपमें काम करने वाले हिन्दुस्थानी राजनीतिज्ञोंको यूरोपकी औरतें अब शायद हंसकर इस तरह न पूछती होंगी, क्योंकि जिनको सम्हालते सम्हालते दश बीस अंग्रेजोंकी नाकमें दम आगया, ऐसे नवयुवक हिन्दुस्थानमें भी हो चुके हैं। यूरोपमें हिन्दुस्थानके विषयमें जो तुच्छता और तिर-स्कार प्रकट किया जाता रहा है, उसे मिटाकर हिन्दुस्था-

नकी महत्ता जमानेवाले साहसी पुरुषोंमें निस्सन्देह सावरकरजी प्रथम और प्रमुख व्यक्ति हैं।

* * *

इन्हीं विचारोंसे प्रेरित होकर सावरकरजी अवसरकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने कई हिकमतासे अपने कार्यके योग्य अवसर उपस्थित कर लिया। पहले प्रकाशित किया जा चुका था कि जहाज मार्सेलिसके रास्ते—फ्रान्स होकर न जायगा—पर वह जाने लगा। सावरकरजी सोचने लगे सम्भव है, मेरी मुक्तिके लिए कुछ हिन्दुस्थानी वीर मार्सेलिसके बन्दरपर आये हों। पर जब जहाज मार्सेलिस पहुंचा, तब कोई भी सहायक वहां दिखाई नहीं दिया। इधर पुलिसवाले भी उनपर सख्त पहरा कर रहे थे—एक मिनिट भी उन्हें छोड़कर इधर उधर नहीं जाते थे। हां, जब उन्हें स्नानके लिए स्नान गृहमें भेजते या जब वे शौचादि क्रियाके लिए जाते तब पुलिस उन्हें किंचित छोड़ती थी। किंचित ही छोड़ती थी। वहीं दरवाजेपर खड़ी खड़ी रहती थी और दरवाजेके द्वारपर लगाये हुए बड़ दर्पणमेंसे उनकी छवि देखती रहती था तथा उनके प्रत्येक कार्यपर ध्यान रखती थी। दो बार उनकी निगाह बचाकर भाग निकलनेका प्रयत्न किया गया। सफलता नहीं मिली। पर, कोई यह जान न सका कि सावरकरजीने इस तरह प्रयत्न किये थे।

सप्तम अध्याय।

फ्रान्सकी भूमिपर गिरफ्तारी।

पौ फट रही थी। जहाजके चलनेका समय हो रहा था। मुसाफिर लोगोंका आना जाना शुरू हो गया था। एक चार छै हाथ लम्बी, चौडी केबिन (कोठरी) के बीचमें सावरकरजी बैठे हुए थे, बगलमें दो यूरोपीयन पुलिस अफसर सो रहे थे, और एक जागकर पहरा दे रहा था। जहाजके चलनेमे थोडाही समय था। यदि कुछ करना है, तब वह अभी करना होगा। पर किया क्या जाय ? पहरेवाले तो सब सावधान थे! आखिर सावरकरजीने निश्चय किया कि एकबार और प्रयत्न किया जाय! जो कुछ होगा, होगा। उन्होंने पहरेवाले गोरेसे कहा—'शौचके लिए चलिए, सुबह होगयी है। वह अपने अफसरोंको जगाने लगा। सावरकरजीने सोचा, बस सारा मामला खतम हो चुका। अब कुछ न हो सकेगा। अफसर और सिपाही दोनोंके बीच सावरकरजी शौचकी कोठरीकी तरफ चले। उनके पहरेदार पूरी सावधानीके साथ उनपर निगाह रख रहे थे। सामनेही दर्पण रखा हुआ था। द्वारपरके काचोंमेंसे गोरा सिपाही झाक झाक कर दर्पणकी ओर देखता था और सावरकरजीकी सारी हल-चल मालूम करता था। कोठरीके ऊपर एक छोटीसी खिडकी-पोर्ट होल—थी। उसका ढक्कन कुछ खुला हुआ था।

जहाजपर प्राय सभी पोर्ट होल्स एकही आकारके होते हैं। सावरकरजीने इन्हें पहलेसेही नाप रखा था। उनके मनमें विचार आया—खिडकीतक किस तरह पहुँचा जाय? अपने स्थानसे जरा हिलतेही तो पहरवाला सिपाही देख लेगा और चिल्लाने लगेगा! अगर प्रयत्न सफल न हुआ तो मामला और भी अधिक बिगड जायगा। पुलिस नाना प्रकारसे हरान करेगी, कष्ट देगी। भाग निकलनेपर गोलिया भी चलायेगीही—पर इन सब प्रश्नों और परिणामोंका विचार वे पहिलेही कर चुके थे! अपने जीवनपर व पहिलेहीसे पानी छोड चुके थे। व वहीं गुन गुनाने लगे—"Now or Never"—अभी या कभी नहीं!

* * *

जल्दीसे उन्होंने अपना गाउन काचके द्वारपर डाला। इधर सिपाहीको काचमेंसे स्पष्टतया कुछ भी न दीख पडा। वह अपना होश सम्हाल भी न पाया था कि सावरकरजी दो तीन लकडियोंको पकड, उछल कूदकर खिडकी तक जा पहुचे। सिपाही 'क्या करता है' 'क्या करता है' चिल्लाताही रहा। इतनेहीमें चुस्त पाजामा और चुस्त बनियान पहने हुए सावरकरजी, पोर्ट होलमे घुसने लगे। सिपाहीने लात मारकर काच का दरवाजा तोड-फोड डाला। वह अदर घुस भी नहीं पाया था कि सावरकरजी खिडकीमेसे पार निकलकर धडामसे समुद्रमे कूद पडे!

* * *

जहाजपर कोलाहल मच गया। सिपाही गालियां देने लगे बड़ातड़ गोलियां चलाने लगे। उधर गोलियां इनका निशाना साध। कर चलाइ जातीं, इधर समुद्रमें गोते लगाकर सावरकरजी निशाने चुकाते हुए चले जाते। सिपाही और अधिकारी खिड़कीके पास आये पर, किसीकी हिम्मत न हुई कि स्वयं कूद पड़ें और सावरकरजीको पकड़ लें। वे चिल्लाते हुए जहाजके कप्तानके पास पहुचे। सारे जहाजमें गड़बड़ मच गयी। ड्रा ब्रिज (पुल) किनारेपर फेंका गया। उसपर सिपाही और अफसर दौड़ने लगे। इसी बीचमें सावरकरजी भी किनारेपर लग गये थे। पर किनारे पर तो ऊंची दीवाल खड़ी थी। जहाजके लोगोंके चीखने चिल्लानेकी वजहसे आस पासके लोग भी उनको रोकनेके लिए आ गये थे।

* * *

बचपनमें सावरकरजीकी संस्थामें शरीरको तैयार करनेकी तालीम दी जाती थी। उनकी संस्थाका नियम था कि प्रत्येक सदस्यको किलोंकी दीवालोंपर चढनेका अभ्यास करना ही चाहिए। वह अभ्यास इस समय काम आया। दीवालपर चढ़कर वे फ्रान्सकी भूमिपर पहुच गये। फ्रांसकी भूमिपर पांव रखतेही उन्होने सोचा, 'मैं यहांतक पहुच गया हूं। अब फ्रांसकी रक्षकतामें आ पहुचा हू' उन्होंने एक दीर्घ-श्वास छोडा। 'बहुत दिनोंके बाद आज मैं स्वतंत्र वायुमें पहुँचा हूँ'

* * *

इतनेहीमें जहाजपरके सभी अधिकारी, नौकर पुलिस आदि भागते चिल्लाते आये—पकडो पकडो, चोर भागा जाता है। दीवालपर पहुचते पहुचते सावरकरजी बिल्कुल थक गये थे। पर एक क्षणभरभी न ठहरकर व तीरकी तरह आगे बढे। भागते भागते व पीछे मुडकर देखते जाते थे। चारों तरफसे अंग्रेज उन्हें घेरे हुए चले आरहेथ। वे बार बार चारो ओर देखते, इस आशासे कि शायद कोई हिन्दुस्थानी आदमी वहा दिखाई दे। उससे पैरीसको और फ्रेंच मैजीस्ट्रेटको तारद्वारा समाचार भेजे जा सकेंगे! उनको यह बतलाया जासकेगा कि फ्रान्सके कानूनके खिलाफ, अंग्रेज पुलिस मुझे गिरफ्तार करना चाहती है, इस ही पकडकर गिरफ्तार किया-जाय! पर आसपास कोई हिन्दुस्थानी दिखाई नहीं दिया। उनको दो चार पैसे देने वालाभी वहा कोई दिखाई न दिया जिससे टिकट खरीदकर व ट्रामपर सवार होसकें। हिन्दुस्थानसे दस हजार मीलके फासलेप इस पचीस वर्षकी आयुवाले नवयुवककी कई अंग्रेजो द्वारा शिकार की जा रहीथी! उसका जीवन सिर्फ चार छै पैसेपर अवलम्बित था!

* * *

वहा पैसे कहासे मावें! पर नवयुवक सावरकरजीने हिम्मत नहीं हारी। वे जोर जोरसे चिल्लाने लगे—फ्रेंच पुलिस! फ्रेंच पुलिस! वे फ्रेंच पुलिसको बुलाते हुए आगे बढ रहे थे, पीछे पाच–पचास आदमियोंकी भीड 'चोर चोर' कहकर भागती आ रही थी। अभी-तक भीड उन्हें पकड नहीं पायी थी। इधर पीछे वालोंकी चिल्लाहटसे आने जानेवाले फ्रेंच लोग भी उनके रास्तेके आडे आने लगे। पर

सावरकरजी सबको बचाकर भगाते चले। इतनेहीमें उन्हें एक फ्रेंच
पुलिस सिपाही पासही दिखाई दिया। उन्होंने सोचा, यहां फ्रेंच पुलिसको
आत्म समर्पण कर देना चाहिए और कह देना चाहिए कि 'मैं चोर
या डाकू नहीं हूं, वरन हिन्दुस्थानकी आजादीके लिए प्रयत्न कर-
नेवाला, इंग्लैण्ड द्वारा पकडा गया राजनैतिक कैदी और फ्र
न्सका एक निर्दोष अभ्यागत हूं। मुझे फ्रेंच मजिस्ट्रेटके पास
चलो।'-सावरकरजी यह सोचकर रुक गये। फ्रेंच पुलि ।
पास आगया और उनके पीछे ही भागनेवाले अंग्रेजोंका झुं समेत
आ गया। उन्होंने उस फ्रेंच पुलिसमैनको पहलेसे ही मिला ुड में
था। वे बड़े अंग्रेज अफसर, जिनकी पोशाकोंपर जरीके लिय
हुए थे, कह रहे थे कि वह चोर है। पुलिसवालेने सोचा, यह फीते लगे
एक अल्प वयस्क हिन्दुस्तानी, एक बनियान और पाजामा नवयुवक,
धूलसे वेष्टित, हिन्दुस्थान नामके कुलियोंका समझे जा पहने हुए,
पद दलित आदमी जरूर चोर होगा। उसने साव वाले देशका
पकडा। सावरकरजीने उसे समझाया कि अगर तुम रजीका हाथ
समझते हो तो समझते रहो, पर जबतक तुम मुझे मुझे चोर सम-
सामने पेश नहीं करते तबतक किसी औरके सुपुर्द फ्रेंच अदालतके
पर उस पुलिस-सिपाहीको कानूनका ज्ञान कहां था? उसे अंग्रेज नहीं कर सकते।
अफसरकी चमकीली गिनियोंका परिचय अधिक था। गिनियोंकी
चमकसे उसकी आंखें फिर गयीं और वह किंकर्तव्य-विमूढ हो गया।
उसकी इजाजतकी राह न देखते, अंग्रेजोंने सावरकरजीको पकड लिया
और खींचते घसीटते समुद्र तटतक ले आये और जहाजमें ढकेल दिया।

* * *

यह रात बड़ी भयानक थी। जहाजकी छोटी सी कोठरीमें पुलिसकी सारी फौज खड़ी हुई थी। बैठनेके लिए जगह ही नहीं रही। एक नंगी समशेर सामने रखदी गयी थी। सन्नाटा छा रहा था। आसपासकी कैबिन्स—कोठरियें—भी खाली करवा ली गयी थीं। जहाजके अन्य यात्री उन कोठरियोंको छोड़ अन्य जगह घूम रहे थे। काली पुलिसके कुछ आदमी आपसमें, सावरकरजीको सुनाते हुए कह रहे थे—'रात होने दो, अंधेरा पड़ने दो, सालेको खूब मजा चखाएंगे।' सावरकरजीने नासिकके नवयुवकोंको पुलिसद्वारा दिये गये, कष्टोंके समाचार, पत्रोंमें पढ़े थे। वे सोचने लगे, क्या पुलिस मेरा भी वही हाल करना चाहती है? क्या मेरा मुँह बन्द कर ये लोग मेरे शरीरपर हाथ डालेंगे? जो हो, इस तरहके अपमान पूर्ण कष्टोंको तो उसी दिन निमन्त्रण दे चुका हूँ जिस दिन राष्ट्रोद्धारके कार्यको उठाया है।

* * *

इतना साहस किया, हिम्मत की, आखिर नतीजा कुछ न निकला। आजाद तो होही नहीं पाये, उलटे पाँवकी बेड़ियां ज्यादा मजबूत और कटीली हो गयीं। सारा राजनैतिक जगतमें भारत ईर्षक उद्देश्यों और प्रयत्नोंका प्रचार भी न हो पाया, क्योंकि समुद्रमें कूदने तथा फ्रांसकी भूमिपर पकड़े जानेकी खबर सिवाय एक फ्रेंच पुलिसमैनके अन्य किसीको मालूम भी न हो पायी। मार्सेलिसके साहसका नतीजा कुछ भी नहीं दीखता। ईश्वरेच्छा। कर्मण्येवाधिकारस्ते!!

* * *

इसी तरह सोचते सोचते जहाजमे अंधेरा छा गया। रात हो गयी। प्रतिक्षण सावरकरजी मार्ग प्रतीक्षा करते थे—अब मार-पीटका आरंभ होता है। थोडी देर बाद पुलिसवालोंका अंग्रेज अफसर, सावरकरजी जिस जगह आँख मूंदकर पडे हुए थे उस स्थानपर आया और उन्हें घूरकर बोल— "कैसा बदमाश है?" सावरकरजीने आख खोलीं। अफसरने कहा, 'तुझे शरम नहीं आयी?' सावरकरजीने कुछ भी जवाब नहीं दिया। इस चुपीसे अधिक स्फुरण पा वह अफसर अंग्रेजीमें गाली देने लगा और मारनेका आविर्भाव करके कहने लगा— "क्या करू, उस समय मैं सोया हुआ था नहीं तो तेरी

।" इन अपशब्दोंको सुनतेही सावरकरजी उठ बैठे। उनके सन्तापका कोई ठिकाना न रहा। तथापि अपने आपको सम्हालते हुए गम्भीरताके साथ उन्होंने कहा, "देखिए महाशय! जिसे आप लोग विद्रोह कहते हैं, उसका झण्डा खडा करते समय ही मैं अपने घर-बारमे पत्ती लगा चुका हू! इतना करनेके बादही मैं दूसरोंके घरोंपर आग रख रहा हू। जिंदा होते हुए भी मैं इस समय मरे समान हू। पर नंगा खुदासे भी जोरावर होता है, इस बातको आप न भूलिए। आपके घर बाल बच्चे जोरू हैं। आपको अभी इस दुनियामे जिन्दा रहनेकी इच्छा है। इस लिए इस बातको अच्छी तरह समझले कि अगर फिर आपमेंसे कोई इस तरहके अपमान-जनक शब्दोंका प्रयोग मेरे लिए करेगा अथवा मुझसे मार-पीट करेगा तो निश्चय जानिये कि मैं स्वयं तो अपनी जान देही दूगा लेकिन मुझपर अत्याचार करने वालेको भी जिंदा

न रहने दूंगा।" सावरकरजीकी यह धमकी वृथा नहीं थी। वह अफसर अपनी पतलूनकी जेबमें भरी हुई पिस्तोल रखकर रातको सोया करता था। इस समय वह पतलून पासकी खूटीपर टगी हुई थी। सावरकरजीने सोच रखा था कि अगर ये लोग मार-पीट करनेपर उतारु होवें तो इनको धक्के दे हटाकर पहले पतलूनसे पिस्तोल लेना चाहिए, पश्चात् इनमेंसे जितनोंको गिरा सकें, गिराकर स्वय भी अपना अंत कर लेना चाहिए।

* * *

सावरकरजीके भयानक और दृढताके साथ कहे हुए शब्द वृथा न गये। वह अफसर सहम गया और कहने लगा "मैं आपको गाली नहीं दूंगा। आप भी कोई अविचार-पूर्ण काम मत करिए। जरा सोचिए कि मैं आपसे कितनी सभ्यताके साथ बरत रहा हूँ, पर आपने मुझे धोखा देकर मेरे बाल-बच्चोंके मुँहका कौर ही छीनना चाहा था। इसी वजहसे क्रोधवश हो, मैं कुछ अपशब्द अभी कह गया हूँ।" सावरकरजीने कहा, "आपका कहना एक तरहसे ठीक है। पर जिस तरह आपके घरपर बाल-बच्चे हैं, उसी तरह क्या मेरे घरपर नहीं हैं? ऐसी अवस्थामें वारट लेकर मुझे पकड़ते समय और इतने सख्त पहरे तथा कठोरताके साथ फाँसीके पास लेजाते समय आपने मेरे बाल बच्चोंका खयाल किया है? आप अगर सभ्य-व्यवहार कर रहे हैं तो मैंने भी कोई असभ्य व्यवहार नहीं किया है। मैं भी सभ्य और नम्र भाषामें आपसे करता आया हूँ। असल दोष उस परिस्थितिका है जिसमें

हम दोनोंकी भेंट हुई है। इस परिस्थितिमें जबतक आप लोग मुझे स्वतन्त्रतापूर्वक हिलने-चलने नहीं देंगे और बांध-जकड़कर फांसीपर लटकानेके लिए ले जाएगे, तबतक मैं भी आपके बन्दोबस्तसे स्वतन्त्र होनेका प्रयत्न करूंगा। इसके लिए, मुझको-आपको एक दूसरेसे रंजिश रखनेकी जरूरत नहीं है। अगर आप मुझे फांसी पर लटकाना अपना कर्तव्य समझते हैं, तो मैं भी आपके हेतुओंको विफल करना, अपना कर्तव्य समझता हूँ।"

* * *

इस बातचीतके बाद, वह नंगी समशेर उस कोठरीमें न रही। पुलिसवालोंकी आपसकी बातें बन्द हो गयीं। गाली गलौज बन्द हो गया। पर, पहरा इतना सख्त हो गया कि सांस लेनेको भी एकान्त अवसर न रहा। उस छोटीसी कैबिनमें दो तगड़े आदमियोंके साथ सावरकरजीको रहना पड़ता था। वहीं भोजन करते थे, वहीं मल-विसर्जन भी कराया जाता था। शौचके समय एक सिपाही अपने हाथमें एक हथकड़ी पहनता और दूसरी इनके हाथमें पहनाता। भोजनके समय भी प्रायः यही अवस्था रहती थी। सूर्य-प्रकाश भी देख नहीं सकते थे तब सूर्य-दर्शनके लिए कहना ही क्या है? डाक्टरसे कहनेपर, कैबिनके सामने ८-९ कदमतक, सूर्य प्रकाशमें जानेकी इजाजत मिली। यह हुई उनकी शरीरकी दुर्दशा, मनकी अवस्था इससे कहीं भयंकर थी। मुक्त होनेका अवसर मिलना असम्भव था। हिन्दुस्थानमें, "विजेताओंके रथके चक्रमें दासकी तरह बांधे जाकर उनके विजयोत्सवकी शोभा बढ़ाने

की अपेक्षा—कितना अच्छा हो, यदि इस समुद्रमें तूफान आ जावे ! यदि यह सारा जहाज 'समुद्रास्तुष्यन्तु' हो जावे ! यदि मेरी कोठरीसे निकालकर कोई मुझे समुद्रमे फेंक दे ! मेरा धर्म आत्महत्या नहीं करने देता। यदि प्रकृति ही स्वय किसी तरह मुझे मृत्युमुखमें डाल दे तो कितना अच्छा हो ! बार बार यही विचार उनके मनमें आता था।

* * *

पहले, एक बार इंग्लैण्डके समुद्र किनारेपर बैठकर, अपनी मातृभूमिकी याद करके सावरकरजीने समुद्रसे कहा था—"ने मजशी ने परत मातृ-भूमीला, सागरा ! प्राण तळमळला।"—मुझे अपनी मातृभूमिमें पहुंचा दे, मेरा जीव व्याकुल हो रहा है। आज उनकी इच्छा पूर्ण हो रही थी ! पर यह वरदान शापकी तरह हो रहा था।

अष्टम अध्याय

हिन्दुस्थानमें आगमन और कालापानी।

भारतवर्षकी पुण्य भूमिको सावरकरजीने वन्दन किया, पर जञ्जीरोंसे जकड़े हुए हाथोंसे। उन्होंने बहुत दिनोंबाद अपने प्रिय देशकी भूमिपर पैर रखा, पर नंगा तलवारोंसे सज्जित सशस्त्र गोरे सिपाहियोंकी दुतर्फा लकीरोंके बीचमें। स्पेशल ट्रेन तयार थी ही, उसकेद्वारा वे नासिक लाये गये। रेल गाड़ीका डिब्बा बन्द था, मोटर भी चारों तरफसे ढकी हुई थी और जहांसे वे गुजरे वहांके मकानोंके दरवाजे भी बन्द थे। साथमें एक भीमकाय अफसर था। उसके हाथमें एक हथकड़ी लगी हुई थी और दूसरी सावरकरजीके हाथमें। शौच-विधि भी इसी अवस्थामें होता था। नासिक पहुंचते ही उनके बाहुओंमें डोरिया डाली गयीं और इस बागडोरको हाथमें लेकर, पांव-बेड़ी और हथ-कड़ी पहने हुए सावरकरजीको पुलिसने अपनी चौकीके आगे घुमाया। इतने सख्त पहरे बन्दीमें भी सुराख पाड़कर एक अंग्रेजी समाचारपत्र सावरकरजीतक पहुंच ही गया। उसमें तार-समाचार छपे थे कि फ्रांसने इंग्लैण्डसे कहा है कि सावरकरको हमें सौंप दो। सारी दुनियामें इस विषयकी चर्चा शुरू हो गयी थी।

* * *

आखिर मार्सेलिसका साहस बिलकुल वृथा न हुआ। हिन्दुस्थानकी आकाक्षाओंकी दुदुभी ससारमें निनादित करनेका एक कार्य तो सधा। 'डेली न्यूज' तथा उसीके जैसे विचारोंके अग्रेजी पत्रोंने लिखा कि 'इटलीमें क्रांति मचानेवाले देशभक्त गैरिबाल्डी और मेजिनीको जब इग्लैण्डने अपनी छत्र-छायामें स्थान दिया था तब फ्रान्सका सावरकरजीको पनाह देना सर्वथा उचित ही है।' यूरोप, अमरीका, इजिप्ट, आयर्लैण्ड, चीन आदि देशोंके समाचार पत्र सावरकरजीकी तुलना मेजिनी, कौसुथ, गैरिबाल्डी आदि देशभक्तोंके साथ करने लगे और समस्त ससारका ध्यान हिन्दुस्थानकी अवस्थाकी ओर आकृष्ट होने लगा। जब सावरकरजी नासिकसे येरोडा जेलमें भेजे जा रहे थे, तब उन्हें 'डेली न्यूज' आदि पत्रोंकी लिखी हुई बातोंके उद्धरण (cuttings) देखनको मिले। तब उस अवस्थामें भी उन्हें सतोष हुआ। पर उन्होंने अपने मनसे तत्काल कहा, 'यदि सकटके समय' 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' कह कर तूने दुःख सहा है, तब सतोषके समय भी 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' कह कर तुझे प्रसन्न न होना चाहिए।'

* * *

अग्रेजी अफसर इस बातपर बहुत आश्चर्य करने लगे कि मार्सेलिसकी घटना प्रगट किस तरह हो गयी। अन्य बातोंके साथ वे सावरकरजीसे इस बातके कहनेके लिए भी अनुरोध करते रहे कि 'तुम्हारे समुद्रमें कूदनेके समाचार किसने प्रकाशित किये।' समाचार चाहे किसीके द्वारा प्रकाशित किये गये हो, पर पहले पहल वे लो

ह्यूमेनिटी' नामके विख्यात साम्यवादी पत्रमें प्रकाशित हुए थे। यह पत्र पेरिससे प्रकाशित होता था और सुविख्यात 'कैपिटल' नामक अर्थशास्त्रके ग्रंथका प्रणेता कार्ल मार्क्सका पौत्र इस पत्रका सम्पादक था। सम्पादकको सावरकरजीसे सहानुभूति थी और इसी लिए 'ला ह्यूमेनिटी' पत्रमें इस विषयमें खलबली मचाने लगा। फ्रेन्च सीनेट (राज्य-परिषद्)में हलचल मच गयी। अवस्था इस हदतक पहुंच गयी कि इंग्लैण्ड और फ्रान्सका मनोमालिन्य होनेकी सम्भावना दिखाई देने लगी। अन्तमें 'हेग'में स्थापित यूरोपीय राष्ट्रोंकी तत्कालीन अन्तर्राष्ट्रीय पंचायतके सामने मामला पेश हुआ। समस्त प्रमुख यूरोपीय राष्ट्रोंका ध्यान इस मामलेके फैसलेकी ओर लगा हुआ था। उनके प्रतिनिधि 'हेग' आये थे। भारतीय क्रान्तिवादी लोग भी वहां एकत्र होते और समस्त राष्ट्र प्रतिनिधियोंके सम्मुख हिन्दुस्थानकी आजादीके प्रयत्नों तथा देशमें किये जानेवाले अत्याचारोंकी कथाएँ रखते। उस समय हेगकी अन्तर्राष्ट्रीय पंचायत संसारकी सर्वोच्च अदालत समझी जाती थी। इस अदालतमें हिन्दुस्थानके राजनैतिक आकांक्षाओंका निर्देश, सर्व प्रथम, सावरकरजीके साहसके कारण ही हुआ।

* * *

इधर हिन्दुस्थानमें राजविद्रोहके मामलोंका झटपट निपटारा करनेवाली Special Tribunals—विशेष अदालतें—कायम की गयी थीं। इनकी स्थापनाके लिए कानून भी पास किया गया था। इस कानूनके अनुसार सरकार द्वारा नामजद किये हुए तीन जजोंको

षडयन्त्रकारियोंको अधिकसे अधिक—फांसी तककी-सजा देनेका अधिकार दिया गया था और उनके फैसलेपर कोई 'अपील' न थी। इधर कानूनी तैयारियां हो रही थीं उधर हिन्दुस्थान और इंग्लैण्ड तथा फ्रान्सकी पुलिसके नाकों दम था। मामलेमें उलझनें बहुत थीं। प्रमाण एकत्र करने और ससारकी प्रमुख पंचायतमें मामला चलानेमें हिन्दुस्थान तथा ब्रिटिश सरकारको लाखों रुपयोंका व्यय करना पड़ा !! और यह सारा व्यय पचीस वर्षके एक मराठा क्रान्तिकारीको जेलकी कोठरियोंमें जिंदा गाड़नेके लिए था !!!

* * *

नासिक-षडयन्त्रका मामला आखिर बम्बई हाइकोर्टमें पेश हुआ। मुख्य आरोपी सावरकरजी थे और इसी लिए समस्त संसार की नजर इस मामलेकी तरफ लगी हुई थी। बम्बई हाइकोर्टकी इमारतके चारों तरफ सशस्त्र घुड़सवारोंका पहरा था। इस षडयन्त्रमें अन्य कई नवयुवक पकड़े गये थे, वे सब आरोपीकी तरह अदालतमें लाकर बैठाये गये थे। इनमें कई लोग ऐसे थे कि जो सावरकरजीसे सम्बन्ध रखनेकेही अपराधी थे। पुलिस प्रत्यक्षमें कहती थी, "इस नष्ट सावरकरने तुम्हें भी नष्ट कर दिया है। अब भी तो उसका नाम छोड़ो, और उसके विरुद्ध जो जानते हो, अदालतसे कहकर मुक्ति-लाभ करो।" अदालतमें कुछ खास वकील ही आने पाये थे, और किसीको प्रवेश प्राप्त नहीं था। अदालतके चारों सड़कोंपर भी लोग एकत्र नहीं हो सकते थे। इसलिए सड़कपरके मकानोंकी खिड़कियोंमें, द्वारोंमें, बरांडोंमें खड़े होकर

सावरकरजीके आनेकी प्रतीक्षा की जा रहीथी। इतनेहीमें चारों तरफसे बन्द की हुई तथा सशस्त्र पुलिस सिपाहियोंद्वारा घिरी हुई सावरकरजी की गाड़ी अदालतके सामने आई। हथकड़ी पहनाकर दो आदमी उन्हें ऊपरकी मंजिलपर ले गये। वहीं एक कमरेमें अदालत लगी हुई थी। अदालतके कमरेमें सावरकरजीके पांव रखतेही—तालियोंकी ध्वनिसे वह कमरा गूंज उठा! सावरकरजी आश्चर्यसे ऊपर देखने लगे—गैलरीमें तो एक भी प्रेक्षक नहीं था। फिर ऐसी अवस्थामें या उनका स्वागत किसने किया? उन्होंने दृष्टि नीचेकी ओर देखा कि जो आरोपी पहलेही लाकर अदालतमें बैठाये गये थे, उनकी गर्दनें पीछेकी तरफ मुड़ी हुई हैं और वे अत्यन्त आदर और उत्सुकताके साथ सावरकरजीकी ओर देख रहे हैं! उनके हाथोंमें हथकड़ियां पड़ी हुई थीं, 'जंजीरकी झनकारसे' उन लोगोंने अपने प्यारे नेताका स्वागत किया था!!!

* * *

जिस समय सावरकरजी मुक्त थे, उस समय कईवार, कई लोगोंने उनका जयजयकार किया था, उन्हें फूलोंकी मालाएं पहनायी थीं। भाषणोंमें उनके प्रति आदर प्रकट किया था और सहस्रोंने तालियोंकी ध्वनिसे उनका स्वागत किया था। पर उस दिन सावरकरजीके हाथोंमें हथकड़ियां पड़ी हुई थीं। उनके शब्द पर विश्वास रखनेके कारण बेड़ी पहिने हुए, उनसे सम्बन्ध रखनेके लिए अपने घरबार का नाश देखनेवाले और पुलिस द्वारा कठोर कष्ट दिये जानेपर भी दृढ़ रहने वाले उनके अनुयायी उनके सामने बेड़ी और हथकड़ीसे

भूमिमें ही बैठे हुए थे। उनके द्वारा किया गया स्वागत असाधारण स्वागत था। संसारमें अनेकोंका अनेक रीतियोंसे सम्मान हुआ है। कई देशभक्तोंके जुलूस शहरोंमें निकाले गये हैं और उनकी गाड़ियां आदमियों द्वारा खींची गई हैं। परन्तु, जिस समय हथकड़ी पहने हुए कैदी के स्वागतके लिए, उसीके लिए हथकड़ी पहने हुए दूसरे कैदियोंने करतल ध्वनि की होगी, उसका स्वागत किया होगा, उस समय उस लोहेकी खनखनाहटसे गूंजनेवाले स्वागतके सामने इस संसारके कौनसे सन्मान, कौनसे सत्कार, कौनसे आदर और कौनसी प्रतिष्ठाने सिर न झुकाया होगा !!!

* * *

अदालतमें मामला चला। प्रमाणादि पेश किये गये। सारे नाटकके बाद सावरकरजीने कहा कि ब्रिटिश कोर्टका अधिकार मुझपर नहीं चल सकता इस लिए इस मामलेमें मैं न तो सफाई पेश करूंगा न कोई भागड़ी लूँगा। इण्डियन पीनल कोडकी १२१ वीं धाराका आरोप उनपर था। अपराध और सजा दोनों भयंकर थे। इस अवस्थामें भी अदालतोंके अधिकारको न माननेवाले प्रथम व्यक्ति सावरकरजी ही थे।

* * *

डेढ मासकी जांचके बाद ता: २३ दिसम्बर १९१० को अदालतके फैसलेका दिन था। आरोपी आपसमें चर्चा कर रहे थे। एक दूसरसे कह रहे थे, देखना चाहिए किसको कितना पारितोषिक

मिला है। सावरकरजी अंदाज करके बतला रहे थे कि किसको कितने वर्षकी काले पानीकी सजा मिलेगी। सजाकी अधिकताके अनुसार पहला, दूसरा तीसरा या चौथा और अन्य नंबर लगाये जा रहे थे। आजतक 'धर्मार्थ देहका' पाठ पढा था, आज उसीकी परीक्षा थी। आज देखना था कि इस परीक्षामें कौन किस श्रेणिमे उत्तीर्ण होता है। इन 'अपराधियोंका' इस तरह विनोद चल रहा था, इतनेहीमें जजके आनेकी सूचना दी गयी। जजने अपना लम्बा फैसला सुनाया। सावरकरजीसे कहा "तीनों अपराधोंके लिए तुम दोषी प्रमाणित हुए हो। तुम्हें फासीकी सजा होनी चाहिए थी, पर हम आजन्म कालेपानीकी सजाकी आज्ञा देते हैं।" सावरकरजी उठ खडे हुए। मस्तक झुकाकर उन्होंने दण्डाज्ञा स्वीकार की और गर्ज उठे 'वन्देमातरम !'

* * *

सावरकरजीके बाद अन्य आरोपी पुकारे गये। उन्हें भी दण्डका प्रसाद बांटा गया। मुकदमेमें अन्य बातोंके साथ सरकार द्वारा यह भी कहा गया था कि ये लोग सदा 'स्वतंत्रता देवीकी जय' बोलते हैं। प्राय सभी आरोपी एकही अपराधके लिए दण्डित किये गये। किसीको १४ साल किसीको १० साल किसीको ३ मास कठिन कारावासकी सजाए दी गयी। आखिर अपना प्रभावोत्पादक समझा जानेवाला कार्य समाप्त कर जज अदालतसे उठे। उनके साथही दण्ड पाये हुए सभी नवयुवक उठ खडे हुए और उन्होंने 'स्वतंत्रता देवीकी जय' के जय जयकारसे अदालतके कमरेको गुंजायमान कर दिया।

* * *

जग छूट परगये। पुलिसके अफसर भाग दौड़ मचाने लगे। चिल्लाकर कहने लगे—'अब ये लोग कैदी हैं, बेंतसे इन्हें ठीक करो।' पहरे सावरकरजीको पुलिसवालोंने खींचा। पुलिसके साथ खिंचते हुए, अपनी टोपी निकालकर, अपने साथियोंसे उन्होंने विदा ली। उनके छोटे भाई नारायणराव भी इन अन्य कैदियोंमें थे। सावरकरजीके मूक-भाव उनके चेहरोंपर स्पष्ट हो रहा था—"अब इन स्वजनोंसे, छोटे भाईसे, प्यारे देशसे इस जीवनमें भेंट न होगी!"

* * *

पर एक आजन्म कालेपानकी सजासे मालूम होता है, सन्तोष न हुआ। उन्हीं प्रमाणके आधार पर, खून करनेके लिए उत्तेजना और सहायता देनेके अपराधमें सावरकरजी पर दूसरा मामला चलाया गया। इस समाचारको सुन लोग कहने लगे 'पहले मुकदमेमें सावरकरजीको फांसीकी सजा न दी जा सकी अतएव यह दूसरा मामला चलाया गया है। यदि सावरकरजी इस मामलेमें भी सफाई पेश न करें तो उन्हें अवश्यही फांसीकी सजा दी जायगी।' कई लोगोंने गुमनाम तार उनके नाम भेजे और उनसे हृदय स्पर्शी शब्दोंमें प्रार्थना की कि वे सफाई पेश करें। परन्तु अभीतक 'हेग' की पंचायतका फैसला नहीं हुआ था, इस लिए सावरकरजीने अदालतकी कार्यवाहीमें भाग लेनेसे इनकार कर दिया। एक तर्फा सबूतके बलपर अदालतका फैसला हुआ। फांसीकी सजा सुननेका अन्दाज करके सावरकरजी अदालतमें गये। पुलिसने भी शायद यही अन्दाज किया था।

* * *

पर न मालूम क्यों, अदालतने उनको फाँसीके लिए आजन्म कालेपानीकी सजा सुनाई। शायद मार्सेल्समें समुद्रमें कूदने का यह परिणाम हो। शायद ५० वर्षका कालापानी फाँसीकी सजासे अपेक्षा अधिक परिणामकारी समझा गया हो। जो हो, ५० साल तक असह्य यातनाओंको सहते हुए, सड़ते गलते मरनेकी अपेक्षा सावरकरजीको फाँसी ही पसन्द थी। पर 'ज्ञान बूझकर सतीका व्रत' वे ले चुके थे। सजा सुनकर शान्त और गम्भीरभाव साथ गर्ज उठे—"I am prepared to face ungrudgingly the xtreme penal of your laws in the belief that it is through suffering and sacrifice alone that our beloved motherland can march on to an assured, if not a speedy, triumph!"—(मेरा दृढ़ विश्वास है कि सबल कष्ट सहन और बलिदानसे ही हमारी प्यारी मातृभूमि यदि शीघ्र नहीं तो भी निश्चित विजय प्राप्त करेगी और इसी लिए आपके कानूनसे दी जाने वाली बड़ी से बड़ी सजाको सहर्ष लेने में प्रस्तुत हूँ।)

* *

कई लोगोंको आशा थी कि हेगकी पंचायतमें सावरकरजीकी विजय होगी और ब्रिटिश सरकारको उन्हें छोड़ देना पड़ेगा। स्वयं सावरकरजी यूरोपीय राजनीतिक दावपेचोंसे परिचित थे अतएव उन्हें हेग पंचायतसे अधिक आशा नहीं थी। सन् १९११ के मार्च मासमें एक दिन जेलके अफसरने सावरकरजीको उनकी कोठरीसे बाहर बुलाया। कैदीकी पोशाक उनके सामने रखी और कहा 'इसे पहन लो। हेग पंचायतका फैसला तुम्हारे पक्षमें नहीं हुआ। तुम अब अंग्रेजोंके कैदी हो। तुम्हें ५० सालकी आजन्म कालेपानीकी सजा भुगतनी होगी।'

नवम अध्याय

कालापानी और पश्चात

सन १९११ में सावरकरजीने कैदीकी पोशाक धारण की और १९२४ में उतारी। वास्तवमें जबसे वे पकड गये अर्थात १९१० के मार्च माससे १९२४ क जनवरी मास तक व अंग्रेजी कैदखानके विशाल मुखमें गायब रहे। उन्हें निगल चुकने पर, कठोर कारावासने उन्हें अपने अदमानक प्रज्वलित उदरमें जला-गला-कर हजम कर डालनेका पूरा पूरा प्रयत्न किया। उस जठराग्निमें सावरकरजी जैसे अनेक नवयुवक आजतक भस्म कर दिये गये हैं। पर सावरकरजी उसके लिए लोहेका चना साबित हुए। कठोर कारावास उन्हें हजम न कर सका। आखिर कारावासका जठर चीरकर वे बाहर आये ही। कालेपानीमें रहते हुए अनेक बार वे मरणासन्न स्थिति तक पहुच गये थे। निराशाकी अंतिम चट्टान पर खडे रहकर अथवा रुग्ण-शैया पर लेटी हुई अवस्थामें मृत्युकी गहरी खाईमें गिरनेके लिए एकही कदम बाकी रह जाता था। पर एकही कदमके फासलेसे उनकी हर बार रक्षा होती रही। अज्ञात करुणा-मयी वत्सल रक्षकता उन्हें बचाती रही। ईश्वरीय प्रेरणासे अतमें वे जनवरी १९२४ में फिर अपने इष्ट-मित्रों और बधुओंमें आये।

इन चौदह वर्षोंके वनवासमें उन्होंने कौनसी कठिनाइयां और कष्ट नहीं उठाये ? जिस आदमीको १ वर्षकी कैद दी जाती है उसे पुनर्मिलनकी आशा रहती है। १४ वर्षकी कैद वाला भी छूटकर अपने बंधु बांधवोंसे मिलनेकी आशा रखता है। पर डबल कालापानी—५० वर्षकी सजा ! कौन कह सकता है इतनी सजा भुगत कर आदमी अपने स्वजनोंमें आवेगा। हां, इतनी सजाके भुगतते भुगतते नष्ट हो जानेकी सम्भावना अवश्य निश्चितसी रहती है। इस तरहके भयंकर दण्ड के शिकार बने हुओं की मानसिक यातनाओंका क्या ठिकाना ! सावरकरजीके चौदह वर्ष भी, हताश और ध्येय प्राप्तिसे निराश हुए कैदीकी तरह बीते हों तो क्या आश्चर्य है। शरीर-कष्ट मनुष्य सहता है—पर मानसिक वेदनाएं और वे भी एक प्रतिभाशाली साहसी नव-युवकके लिए कितनी दुस्सह होती होंगी ! साथ ही उन्हें अपने अकेलेके लिए कष्ट न था। उनके सामने उनके बड़े भाई—गणेशपंत सावरकरके कष्टका दृश्य था। अंदमानकी असहनीय एवं घुला घुलाकर प्राण लेनेवाली अवस्थामें वे भी देश-भक्तिका दण्ड भुगत रहे थे। उन्हें भी आजन्म कालेपानीकी सजा दी गयी थी। इन दोनों भाइयोंको परस्पर दिये जानेवाले कष्टों और किये जानेवाले अप-मानोंको अपनी आंखों देखना पड़ता था और उनके सताये हुए हृदयोंको दुगना दुःख-भार उठाना पड़ता था।

* * *

सावरकरजीके चरित्रकी रूप-रेखाके साथ ही साथ अन्य महत्वपूर्ण बातोंका उल्लेख भी आवश्यक है। जिस समय सावरकरजी

पर विलायतमें वारट निकला हुआ था, जिस समय उनके बड़े भाई गणेशपतको आजन्म कालेपानीकी सजा दी जा चुकी थी, जिस समय छोटे भाई नारायणरावको (जो आजकल डाक्टर सावरकरके नामसे विख्यात हैं) भी कैदकी सजा मिल चुकी थी, उस समय सावरकरजीके कुटुम्बमें कोई कार्यकारी पुरुष नहीं रह गया था। सावरकरजीके कुटुम्बकी सहायता, उन दिनों सरकारकी दृष्टिसे समस्त महाराष्ट्रमें बड़ा भारी अपराध था। फिर नासिकके लोग भी क्यों भय-भीत न हों? सावरकरजीके श्वशुर श्री चिपलूनकर-जिनकी एक रियासतकी ओहदेदारीकी नौकरी केवल इस अपराधमें गयी थी कि वे सावरकरजीके श्वशुर हैं —समस्त सरकारी आपत्तियोंका मुका-बला कर अपनी कन्याका प्रतिपालन करते रहे। पर देशभक्त गणे-शपतकी पत्नीको बहुत कष्ट सहने पड़े। नासिक शहरमें उन्हें ठहरने रहनेके लिए मकान देनेमें भी लोगोंको भय मालूम होने लगा। उनके सम्बधियोंने भी सरकारी भयसे उनसे सम्बन्ध-त्याग किया! देशभक्तिके अपराधमें कालेपानीकी सजा पाये हुए कैदीकी पत्नी! सर-कारी आतकके समय, दुर्बल महाराष्ट्रमें उन्हें कौन सहारा देने लगा! हां, फ्रान्ससे मैडम कामा उन्हें धन भेजती थीं और इसलिए भोजन-चिंतासे वे मुक्त थीं। उस वीर पत्नीको मकानके न मिलनेसे, मठ-में रहना पड़ा! पर डा० नारायणरावके मुक्त होनेतक ही उन्हें कष्ट सहने पड़े। उसके बाद, अपने पतिके कष्टोंकी याद करके वे दिन ब दिन सूखने लगीं। गणेशपतजीके कारावासके बाद कई दिनों तक उनसे मुलाकात करनेकी इजाजत नहीं मिली! आखिर जिस दिन डा० नारायणरावको अपने दोनों भाइयोंसे, उनकी पत्नियों

सहित, मिलनेकी इजाजत मिली, उसी दिन गनेशपन्तकी पत्नीका देहान्त हो गया! विधि घटनाकी विचित्रता!

* * *

इस सुधरे हुए शासनमें सुधरी हुई सभ्यजाति द्वारा उच्च शिक्षा प्राप्त वीरोंकी कितनी दुर्गति की जाती है! राजनैतिक कैदियों के साथ ब्रिटिश शासन द्वारा किये जाने वाले दुर्व्यवहारकी कहानी सुनकर प्रत्येक स्वाभिमानी देशवासीके हृदयमें क्षोभ पैदा होता है! बैरिस्टर सावरकरजी तेलके घानेमें जोते जाते थे। ब्रिटिश शासक स्वयं स्वतन्त्रता प्रेमी हैं पर उन्हें दूसरकी स्वतन्त्रता नहीं भाती। अपने देशको स्वतन्त्र करने वाले देश-भक्त सभी संसारमें आदरके साथ देखे जाते हैं। परन्तु असहिष्णु जाति यदि गुणोंको भी दोष समझने लगे, तो क्या आश्चर्य। किसी खूनी अथवा डकैत को दिये जानेवाले सभी कष्ट सावरकरजीको दिये गये। इतना कहनेसे ही उनके कालेपानीके कष्टोंकी यथार्थ कल्पना की जा सकती है।

* * *

कष्ट सहते हुए भी सावरकरजीके देशभक्तिके प्रयत्न बन्द न पड़े। जेलमें रहते हुए, उन्होंने कई कैदियोंको लिखना पढ़ना सिखाया। अर्धशिक्षितोंको सुशिक्षित बनाया। हिन्दू कैदियोंको धर्म-भ्रष्ट करनेके लिए कई मुसलमान लोग प्रयत्न करते रहते हैं। सावरकरजी जेलमें भी मुसलमानोंके हथकन्डोंसे हिन्दुओंकी रक्षा करते रहे हैं। यह बात आश्चर्यके साथ सुनी जायगी कि उन्होंने धर्म भ्रष्ट हिन्दुओंको—जो मुसलमान बन चुके थे—शुद्ध

फिरसे हिन्दू बनाया। इस उद्योगके लिए उन्हें कई बार मुसलमान गुण्डोंका मुकाबला करना पडा। उनके भाई गणेशपनजीके शरीरको चोट भी पहुँची। परन्तु इन सब कठिनाइयों और धमकियोंसे लडते भिडते, उन्होंने अपना काम जारी रखा!

* * *

अभी हालहीमें—जब सावरकरजी रत्नागिरिके जेलमें थे तब उन्होंने एक सिंधी मुसलमानके हाथसे एक धर्म-भ्रष्ट हिन्दूको छुडाया था। उस समय वहाके सिंधी मुसलमानोंने सावरकरजीको मार डालनेकी धमकी दी थी और एक सिंधीने उनपर आक्रमण भी किया था। जेलसे छूटनेके अंतिम दिन तक सावरकरजी हिन्दुओंकी रक्षा करते रहे। कालेपानीकी जेलमें उन्होंने शिक्षा प्रचारका कार्य इतने बढिया ढगसे किया कि एक बार समय उपस्थित होनेपर वहाके जेलरको भी यह बात माननी पडी कि सावरकरजीके प्रयत्नसे वहाँके ७३ फीसदी कैदी शिक्षित हुए हैं!

* * *

इसी वर्षके आरम्भमें बम्बईके गवरनरने सावरकरजीका स्वास्थ्य बहुत ही गिरते देख, पाच साल तक किसी राजनैतिक काममें हाथ न डालनेका करार करवा, उन्हें मुक्त कर दिया। एक तरहसे अब भी वे बन्दी-गृहमें ही हैं। हिन्दुस्थानके अन्य क्रांति-कारियोंको सरकारने कई दिन पूर्व छोड दिया है, पर सावरकरजी पर अब भी वह अपना अंकुश बनाये हुए है। शायद ब्रिटिश सरकार उनकी योग्यता बहुत अधिक समझती है और इसी लिए अन्य देशभक्तोंकी अपेक्षा अधिक दण्डसे उन्हें विभूषित करना चाहती है।

दशम अध्याय

महाराष्ट्रीय जनता द्वारा सम्मान

देशभक्त विनायकराव सावरकरको 'थैली' अर्पण करनेका कार्य १८ अगस्त १९२४को, बडे समारोहके साथ नासिकमें सम्पन्न हुआ। नासिकमें दो थियेटस हैं, किन्तु इस समारोहके लिए वे मिल न सके, शायद सावरकरजीका विशल नैभर उन नाच-रंगकी ईमारतोंको असहनीय प्रतीत हुआ। फिर भी पहले पानीमें, पचवटोके राम म देरमें, श्री केलकरके कथनानुसार, १४ वर्षका कठिन वनवास (कारावास) और ५ वर्षका अज्ञातवास (शर्तकी अवधितक) भुगतनेवाले वीर विनायकरावका सम्मान समारंभ, काले रामके मंदिरमें बडी शानसे हुआ। नासिकसे एक मीलकी दूरी पर, अधेर और पानीके साथ साथ कीचडकी अडचनोंको सह कर भी, हजारों पुरुष और महिलाएं इस समारोहमें सम्मिलित होने आयी थीं। पूनेसे श्री केलकर आदि भी आये थे। शंकराचार्य डा. कुर्तकोटीने एक दुशाला और आशीर्वाद पत्र भेजा था। डा. मुंजेने सभापतिका आसन ग्रहण किया था।

मंगल-गायनके पश्चात श्री केलकरने निम्नलिखित सम्मान-पत्र पढ सुनाया:—

देशभक्त विनायक दामोदर सावरकर, बी. ए., बैरिस्टर, की सेवामें, सम्मान-पत्र।

आपकी उत्कट देशभक्ति एवं देशके लिए उठाये हुए आपके कठिन कष्टोंके लिए महाराष्ट्रीय जनताके हृदयमें आपके प्रति अत्यन्त आदर है।

धर्मकी तरह राजनीतिमें भी मार्ग–भिन्नत्व और साधनवैचित्र्य का होना सर्व–सामान्य एवं सुप्रतिष्ठित है। आपके दीर्घकालीन कष्टमय कारावासके पहलेका आपका सार्वजनिक कार्य, यद्यपि अल्पकालीन था, तथापि वह "मुहूर्त ज्वलित श्रेय" की उक्तिके अनुसार तेजस्वी तथा स्फूर्तिकारी रहा है। अपनी अन्तरात्माकी आज्ञानुसार कार्य करने तथा उसके परिणामोंको आनंदसे सहनेमें ही प्रगति की जड है। कमसे कम, इस देशमें तो, आजन्म काले पानी की सजा भुगतकर वापिस आना, एक प्रकारका पुनर्जन्म समझा जाता है। इतने कष्ट उठानेपर भी आपका धैर्य विचलित नहीं हुआ है और आपने सार्वजनिक कार्य करनेकी हिम्मत कायम रखी है। यह बात अलौकिक है। इस अलौकिकताके लिए समस्त महाराष्ट्र आपकी आनंदाश्चर्यसे सराहना करता है।

आदर, कृतज्ञता, सराहना आदि सद्भावोंके निदर्शनार्थ, महाराष्ट्रकी ओरसे आपको अल्प भेंट अर्पण करनेके लिए आजका समारोह है। आशा है कि, 'भेंट' का स्वीकार कर आप अपने मित्रों को कृतार्थ करेंगे।

कारावाससे आप मुक्त हो चुके हैं, तथापि सरकारी शर्तोंकी काटकी बागड अभी आपके चारों ओर है। हम परमात्मासे विनय करते हैं कि वह बागड शीघ्र ही टूट जाय और स्वतंत्रता पूर्वक सार्व-

जनिक कार्य करनेके लिए आपका रास्ता साफ हो जाय। इस प्रार्थनाके साथ हम यह भेंट आपको अर्पण करते हैं।

* * *

मानपत्र समर्पणके बाद श्री. केलकर, डा मुंजे, गुजाल, आदि देशभक्तोंके भाषण हुए। मानपत्र तथा १२ हजारकी थैली की भेंटके उत्तरमें

विनायकराव सावरकर

भाषण देनेके लिए खडे हुए। आपने कहा, "आपलोगोंने मेरा जिस तरह सम्मान किया है, उसका जवाब मैं क्या दूं ? इस अवसर पर, लगभग १४ वर्ष पहले की एक बात मुझे याद आती है। मुझे सजा सुनाई जा चुकी थी और कैदियोंकी गाडीमें बंद करके तथा आगे और पीछे घुडसवारोंके घेरेमें, मैं कहीं ले जाया जाता था। गाडीकी तंग जगहमें अंधेरा था, हाथोंमें हथकडियां थीं। गाडी खड-खड चल रही थी, बाहरके आदमियोंका आवाज सुन पडता था, पर मैं किसीको देख नहीं सकता था। उस समय एक पुलिस अफसरने, जो एक खां साहब थे, गाडीकी खिडकी जरा हटाकर मुझसे कहा, "सावरकर! तुम्हारी हालत पर मुझे रहम आता है। तुम जैसे जवान, बैरिस्टरी करनेके बजाय जेलमें जावें—यह बात अच्छी नहीं। वह सामने वाला बंगला देखो, वह तुम जैसे एक बरिस्टरका है। सिर्फ ४ सालकी वकालतसे उसने इतना धन और यश प्राप्त किया है।" मैंने कहा, "खां साहब, क्या आप समझते हैं कि मैंने वकालत नहीं की ? नहीं, यह बात नहीं है। मैंने एक बडा मुकदमा लिया" वह

किसी आदमीका नहीं है। वह तुम जैसे देशभाइयोंका मुकदमा है। आप इस मुकदमेको जानते नहीं हैं। इसी लिए आपने मेरे हाथमें हथकड़ियां पहनाई हैं।" मैंने उस अफसरको जो कुछ कहा था, उसमें अगर आजके अवसरके योग्य कोई बात हो, तो आप उसे ग्रहण कीजिए। वह मुकदमा इतना लंबा निकला कि आज इतने साल हो गये हैं, पर उसकी समाप्ति नहीं हुई। उस मुकदमेके लेनेके लिए, उस समय हथकड़ियोंसे मेरी इज्जत की गयी थी पर आज लोहशृंखला फूलकी माला बन गयी है। आज इतने वर्षोंके बाद मुकदमेकी फीस भी मुझे दी जा रही है—इतनी कि जो मुझसे उठ भी नहीं सकती।

अंदमानकी काल कोठरीमें रहते हुए भी मैं सन्तुष्ट था। मैं समझता था कि मेरी मृत्यु वहीं होगी। मैंने जो कुछ किया था, निरपेक्ष बुद्धिसे किया था और इसी लिये मुझे दुख नहीं होता था। आज-जैसा मेरा सम्मान किया जायगा, यह बात मेरे मनमें कभी नहीं आई। आजकी सभामें कई नवयुवक होंगे। मेरा सम्मान देख कर वे यह न समझें कि समाज-सेवा, जाति सेवा या धर्म सेवा, सम्मान प्राप्तिके लिए करनी चाहिए। नवयुवको! जिन लोगोंने धर्म प्रचारके लिए शरीर धारण किया, और आज जो 'शहीद' समझे जाते हैं, उनकी तरफ देखो। ईसा मसीह सूलीकी तरफ देखता था, सम्मानके तरफ नहीं। कैद होनेके बाद राज्याभिषेकका स्वप्न शिवाजी महाराजने कभी नहीं देखा था। अपने धर्मको करते हुए मरो। कार्यारंभ करते समय ही सोच लो कि मार्ग कांटोंसे भरा हुआ है।

स्पार्टाका एक वीर समर क्षेत्रमें आहत होकर गिरा हुआ था। लोगोंने कहा, 'तुम्हारी वजहसे स्पार्टाको विजय हुई है। बताओ, तुम्हारा स्वागत किस तरह किया जाय।' उस समय उस वीरने कहा था, मेरी कब्रपर लिख दो, Sparta has worthier sons than he and worthiest will take birth! स्पार्टाके पास इससे बढ़कर पुत्र विद्यमान हैं और आनेवाली सन्तान और भी बढ़िया पैदा होगी।' मैं भी वही कहता हू, मुझसे हजार गुना तेजस्वी, वीर्यशाली वीर आज भी देशमें हैं और आगे भी पैदा होंगे।

भेंटको स्वीकार करते, मुझे सकोच होता था। महाराष्ट्रका मैं सेवक हूं। मेरी सेवाका जो गौरव किया गया है, उसे मैं 'बिदागी' के रूपमें नहीं लेता वरन जाति, धर्म, साहित्य और मेरी शर्तें निपट चुकने पर, राजनैतिक सेवाके लिए बयाना (पेशगी) के रूपमें मैं इसे ग्रहण करता हूं।'

* *

परमात्मा करें, सावरकरजी लिये हुए बयानेका पूरा मूल्य चुकानेके लिए, दीर्घजीवी होवें।

श्रियुत केलकरकी भूमिका

मराठी चरित्रमें केसरी-सम्पादक श्री० नरसिंह चिन्तामणि केलकरने निम्न लिखित भूमिका लिखी है —

मैंने कभी नहीं सोचा था कि श्री० विनायकराव सावरकरका चरित्र उनकी जिंदगीमेंही लिखा जायगा। वह लिखा गया, छपचुका और उसकी प्रस्तावना लिखनेके लिए भी मुझसे कहा गया है। मैं इसे एक आश्चर्यमयी घटना समझता हूँ। चरित्र-लेखक महाशयने मुझे इस तरह जो सम्मान दिया, उससे इनकार करना मुझे ठीक न जँचा और प्रस्तावना लिखनेका भार भी मुझे जरा अधिक मालूम हुआ। इन बातोंके कारणोंका उल्लेख करना मैं ठीक नहीं समझता। मैं जानता हूं कि मेरे तथा सावरकरजीके मनोकी रचनाही इस तरहकी है कि हम दोनोके विचार कई बातोंमें भिन्न हैं। परन्तु जेलसे छूटनेके पहले उनकी मेरी भेंट कभी नहीं हुई थी न बातचीतसे मुझे यह जाननेका अवसर मिलाथा कि उनके विचार मेरे विचारोंसे कहातक मिलते हैं। यदि मैं भूलता नहीं हूं तो, सन१९०७ में मेरा सावरकरजी से एकबार सम्बन्ध आया था। 'सार्वजनिक सभा'की एक सभामें मैं सभापति था और सावरकरजी एक वक्ता थे। सभासे लौटते समय में सावरकरजीकी तेजस्वी वक्तृतासे, मनही मन सराहना करता जा रहा था और शायद सावरकरजी विदेशी वस्त्रोंकी होलीका विरोध करनेवाले मेरे भाषणको बुरा भला कहते हुए सभासे लौट रहे हो। अभी रत्नागिरि जेलसे छूटकर जब सावरकरजी

मुझसे मिलनेके लिए पूने आये थे, तभी उनसे मेरी प्रत्यक्ष बातचीत हुई।

पर, सावरकरजीसे मेरी भेट यद्यपि पहले नहीं हुई थी, तथापि उनकी कीर्ति में सुन चुका था। उनके मेरे विचार भिन्न रहने पर भी मैं उनके साहसी स्वभावकी सराहना करने वालोंमेंसे था और हूं। उनकी देशभक्ति आयरिश देशभक्तों जैसी थी। मैंने स्वय आयर्लैण्डका इतिहास लिखा है। जब दूर देशके एक देशभक्तकी हम सराहना करते हैं तब अपने निकटस्थ, अपनेही समाजमें पैदा हुए देशभक्त की सराहना न करना, मेरे मतानुसार एक तरहसे अपराध है। मैं इसके पूर्वभी यही समझता था और आज भी यही समझता हू। स्वर्गवासी गोखले महोदय सावरकरजीके अवैध साधनोका बिलकुल पसद नहीं करते थे, पर सावरकरजीके अनेक गुणोंकी स्व० गोखले न स्वय मेरे सम्मुख कई बार प्रशसा की थी। सावरकरजी और मेरे स्वभावमे भेद है, और उनका और मेरा साधनोके विषयमें यद्यपि मतभेद रहा है, तथापि आज वह नहीं है। और इसीलिए इस प्रस्तावनाका लिखना मैंने स्वीकार किया है।

सावरकरजीने अभी जो बातें कही हैं, उनसे उनके पहले चरित्रपर एक तरहसे पर्दा पड़गया है और वह किसी पदार्थ-सग्रहालयकी काचकी अलमारीमें रखने लायक वस्तु बन गया है। प्रत्यक्ष वर्तमान अवस्थासे सम्बन्ध न रखनेवाली घटनाओंको हर कोई निर्विकार मनसे देख सकता है एव उनके विषयमें निर्विकार मनसे बोल सकता है। यह अवस्था स्वय उस आदमीकी भी हो सकती है जो उन घटनाओंसे सम्बद्ध हो। किसी अवस्था-प्राप्त आदमीको

उसके बरपाके नटखटी अवस्थाका फोटो दिखाया जाय तो उसके जो विचार हो सकते हैं, शायद वही विचार सावरकरजीके अपने पूर्व चरित्रके विषयमें आज होंगे।

पहाड़की चोटी पर कुछ स्थान ऐसे होते हैं कि जिनपर बरसा हुआ पानी यदि पूर्व समुद्रसे जाकर मिलता है तो उनसे एक ही अंगुलीके फासले पर बरसा हुआ पानी पश्चिम समुद्रसे जाकर मिलता है। मनुष्यके उन्नत भावोंका भी यही हाल रहता है। देशभक्तिकी उत्कटतामें, स्वभाव-भेदके कारण कुछ देशभक्त तत्काल परिणामकारी क्रान्तिकारक मार्गका अवलम्बन करते हैं तो कुछ दूसरे, वैध आन्दोलनका मार्ग अपनी शक्ति आजन्म खपाते रहते हैं। दोनोंकी ध्येय-निष्ठा समान ही रहती है पर मार्गोंकी भिन्नताके कारण उनके अनुभवभी भिन्न भिन्न होते हैं और प्रत्येकको अलग अलग तरहकी कीर्तिका फल मिलता है। परन्तु सावरकरजीके लिए दोनों मार्गोंके अनुभवके साथ साथ दोनों प्रकारके फलोंके लाभकी सम्भावना दीखती है। पहिले—अर्थात क्रान्तिकारी मार्गका अनुभव वे ले चुके हैं। उन्होंने एकबार कहा था कि हिन्दुस्थान को राजनैतिक सगठन प्राप्त हो गया है अतएव क्रान्तिके लिए अब अवसर नहीं है। जिस दिन ये विचार उन्होंने प्रगट किये, उसी दिनसे उनका दूसरा मार्ग शुरू हुआ। उनके एक निकटस्थ मित्रने कुछ दिन पहले मुझसे कहा था कि प्रतियोगी सहकारितापर सावरकरजीका पूर्ण विश्वास है। सम्भव है कि उनकी जेल सम्बन्धी अडचन (Disqualification) निकल कर वे किसी दिन बम्बईकी कौन्सिल में चुन जायँ और मंत्री भी बनाये जायँ। विलायतके ऐसे कई

उदाहरण दिये जा सकते हैं। 'लैंडलीग' आन्दोलनमे जेल जानेवाले आयरिश देशभक्त टिमथी हेली, नये आयरिश 'स्वराज्य' में गवरनर हुए। मजदूर दलके प्रारंभिक आन्दोलनमें कैद पाये हुए और गिट्टी तोडनेका काम कर चुकनेवाले महाशय जान बर्नस इंग्लैण्डके मन्त्रिमंडलमें मत्री बनाये गये। उन्नीसवीं शताब्दिके मध्यमे बलवा करनेके अपराध मे फासी की सजा पाये हुए सर चार्लस गैवन डफी महाशय आस्ट्रेलियाके प्रमुख मत्री बने। 'पुरुषस्य भाग्य' वाली कहावत सुविख्यात है। गैरिबाल्डीको फासीकी सजा दी जा चुकी थी, पर सिसिली टापूको जीतकर राजाको अर्पण करनेका सम्मान उन्हेंही प्राप्त हुआ। जो गैरिबाल्डी एक बार फासीपर लटकाया जानेवाला था वही इटलीका उद्धारक माना गया और राजाके साथ, एकही गाडीमें बैठाकर उसका जुलूस निकाला गया। इस तरहके परिवर्तनों-को लक्ष्यकरके विख्यात आयरिश नेता विलियम ओब्रायनने अपने ग्रथ 'आयरिश आयडियाज' में लिखा है —

"The ingenuity which had formerly to be employed to shake off the nightmare in the dark gray coats and rifles has now only to be applied to the more innocent, if more difficult task of evading "the little addresses" and the "few words" with which popular hospitality will insist upon enlivening the road" (लडाईकी सामग्रीसे होने वाले भयको हटानेके लिये पहले जिस तरकीबका उपयोग करना पडता था उसीका उपयोग अब अधिक कठिनतासे बचाये जा सकनेवाले परन्तु अधिक निष्पाप स्वागतों और व्याख्यानोंसे बचनेके लिए करना पडता है, जो हरजगह जनता द्वारा किये जाते हैं)।

भाग्यचक्रके उलटे-सीधे खेल प्राय इस ससारमे हुआ ही करते हैं। अवस्थाके ८० वें वर्षमे स्व० दादाभाई नौरोजीने कलकत्तेमें कहा था कि "अगर मैं जवान होता तो इस समय बलवा खड़ा करता।" विनायकराव सावरकरको अवस्थाके ३६ वें वर्षमें ही क्रान्तिका अनुभव करलेनेके पश्चात प्रतियोगी सहकारिताके करनेका अवसर मिल रहा है।

परन्तु अद्भुत रम्यताकी दृष्टिसे उनका मत्री होजाना नवयुवकोंके लिए उतना आकर्षक न होगा जितना विलायतसे हिन्दुस्थान आते समय किया गया उनका पराक्रम। मत्री कई लोग होते हैं, पर अपने जीवन पर पानी छोड़कर पराक्रम करनेका अवसर थोडोंहीको मिलता है और अवसर मिलनेपर भी उसको साधनेवाले बहुतही कम होते हैं। सरकार घमड करती है कि लडाईके बाद उसने लीग आफ नेशन्समे हिन्दुस्थानका प्रवेश कराया। पर जहाजके पोर्टहोल (हवा आनेकी खिड़की) मेंसे समुद्रमे कूदकर, फ्रांस की भूमितक पहुँचकर, अतर-राष्ट्रीय कानूनकी बहस करके, ससारके समस्त राष्ट्रोंके सामने अपना मामला रखकर—लीग आफ नेशन्सका सभासदत्व हिन्दुस्थानको सावरकरजीने, लडाईसे ९ साल पूर्व ही प्राप्त करा दिया था।

अस्तु। सावरकरजी छूटकर आये हैं और उन्हें किंचित स्वतत्रता भी मिली है। परन्तु नजरबन्द-वासके ४-५ साल अभी उन्हें और बिताना हैं। मैं आशा करता हू कि उनके ये दिन भी शीघ्र निकल जायगे और जितने वर्षतक उन्हें कारावासमें रहना पडा है, कमस कम उतने वर्षतक नये मार्गोंसे देश सेवा वे कर सकेंगे।

बम्बई,
६ अगस्त १९२४ } नरसिंह चिंतामणि केलकर।